ॐ

आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित

द्रव्य-संग्रह

संस्कृत छाया, हिन्दी पद्यानुवाद, गुर्जर अन्वयार्थ तथा
हिन्दी गाथार्थ तथा
अंग्रेजी भावार्थ सहित

हिन्दी पद्यानुवादक
आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज

*

संकलनकर्ता
श्री परिमल किशोरभाई खंधार, बंबई

*

प्रकाशक
श्रीमती समताबहेन खंधार चेरिटेबल ट्रस्ट
२, आशियाना स्टर्लिंग पार्क, ड्राइव-इन सिनेमा के पास,
अहमदाबाद-३८००५२

ॐ

❀ मंगलाचरण

मूल गाथा : **जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं ।**
देविंदविंदवंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा ॥ १ ॥

संस्कृत छाया : जीवमजीवं द्रव्यं जिनवरवृषभेण येन निर्दिष्टम् ।
देवेन्द्रवृन्दवन्द्यं वन्दे तं सर्वदा शिरसा ॥ १ ॥

पद्यानुवाद : *जीव सचेतन द्रव्य रहे हैं, तथा अचेतन शेष रहें,*
जिनवर में भी जिन-पुंगव वे, इस विध जिन-वृषभेश कहें ।
शत-शत सुरपति शत-शत वन्दन, जिन-चरणों में सर धरते,
उन्हें नमूँ मैं भाव-भक्ति से, मस्तक से झुक-झुक कर के ॥ १ ॥

अन्वयार्थ : [जेण जिणवरवसहेण] જે જિનવર વૃષભ ભગવાને [जीवमजीवं दव्वं] જીવ અને અજીવ દ્રવ્યનું [णिद्दिट्ठं] વર્ણન કર્યું છે, [देविंदविंदवंदं] દેવેન્દ્રોના સમૂહથી વંદનીય [तं] તે પ્રથમ તીર્થંકર વૃષભદેવને હું (શ્રી નેમિચન્દ્ર સિદ્ધાંતિદેવ) [सव्वदा] હંમેશા [सिरसा] મસ્તક નમાવીને [वन्दे] વંદન કરું છું.

हिन्दी गाथार्थ : मैं (नेमिचन्द आचार्य) जिस जिनवरों में प्रधान ने जीव और अजीव द्रव्य का वर्णन किया उस देवेन्द्रादिकों के समूह से वंदित तीर्थंकर परमदेव को सदा मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

Translatien : I always salute with my head that eminent one among the great Jinas, who is worshipped by the host of Indras[1] and who has described the Dravyas (substances) Jiva[2] and Ajiva[3].

*

1. King of Devas. 2. Living Substances. 3. Non – living substances.

❀ जीव द्रव्य का कथन

जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेहपरिमाणो ।
भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्ससोड्ढगई ॥ २ ॥

जीवः उपयोगमयः अमूर्तिः कर्ता स्वदेहपरिमाणः ।
भोक्ता संसारस्थः सिद्धः सः विस्रसा ऊर्ध्वगतिः ॥ २ ॥

सुनो ! जीव उपयोग-मयी है, तथा अमूर्तिक कहलाता,
स्व-तन-बराबर प्रमाणवाला, कर्त्ता-भोक्ता है माता ।
ऊर्ध्व-गमनका स्वभाववाला, सिद्ध तथा है अविकारी,
स्वभाव के वश, विभाव के वश, कसा कर्म से संसारी ॥ २ ॥

[सो] તે (જીવ) [जीवो] જીવે છે (દ્રવ્ય અને ભાવપ્રાણથી); [उवओगमओ] ઉપયોગમય છે; [अमुत्ति] અમૂર્તિક છે, [कत्ता] કર્તા છે; [सदेहपरिमाणो] પોતાનાં શરીરપ્રમાણ રહેવાવાળો છે; [भोत्ता] ભોક્તા છે; [संसारत्थो] સંસારમાં રહેવાવાળો છે; [सिद्धो] સિદ્ધ છે; [विस्ससा] સ્વભાવથી [उड्ढगई] ઊર્ધ્વગમન કરવાવાળો છે.

जो जीता है, उपयोगमय है, अमूर्तिक है, कर्त्ता है, अपने शरीर के बराबर है, भोक्ता है, संसारमें स्थित है, सिद्ध है और स्वभाव से ऊर्ध्वगमन करनेवाला है, वह जीव है ॥ २ ॥

Jiva is characterised by upayoga[1], is formless and an agent[2], has the same extent as its own body, is the enjoyed (of the fauits of Karma), exists in samsar, is Siddha[3] and has a characteristic upward motion.

*

1. Menifestation of conciousness. 2. doer. 3. accomplished liberated souls.

❀ जीव का लक्षण

तिक्काले चदुपाणा इंदियबलमाउआणपाणो य ।
ववहारा सो जीवो णिच्छयणयदो दु चेदणा जस्स ॥ ३ ॥

त्रिकाले चतुःप्राणाः इन्द्रियं बलं आयुः आनप्राणः च ।
व्यवहारात् सः जीवः निश्चयनयतस्तु चेतना यस्य ॥ ३ ॥

आयु श्वास औ बल इन्द्रिय यूँ, चार-प्राण को धार रहा,
विगत-अनागत-आगत में यह, जीव रहा व्यवहार रहा ।
किन्तु जीव का सदा-सदा से, मात्र चेतना श्वास रहा,
निश्चय-नय का कथन यही है "यह हम को" विश्वास रहा ॥ ३ ॥
– दिला हमें विश्वास रहा ॥

[ववहारा] વ્યવહાર નયથી [जस्स] જેને [तिक्काले] ત્રણેય કાળમાં [इंदियबलमाउ] ઇન્દ્રિય, બળ, આયુ [आणपाणो य] અને શ્વાસોચ્છ્વાસ [चदुपाणा] એ ચાર પ્રાણ હોય છે, [दु] અને [णिच्छयणयदो] નિશ્ચયનયથી [जस्स] જેને [चेदणा] ચેતના હોય છે [सो] તે [जीवो] જીવ છે.

व्यवहार नय से तीनकाल में इन्द्रिय, बल, आयु और श्वास निःश्वास इन चारों प्राणों को जो धारण करता है, वह जीव है, और निश्चयनय से जिसके चेतना है, वही जीव है ।

According to Vyavahara Naya[1], that is called Jiva, which is possessed of four Pranas viz., Indriya (the senses), Bal (force), Ayu (life) ard Ana-Prana (respiration) in the three periods of time (viz., the present, the past and the future), and according to Nischaya Naya[2] that which has consciousness is called Jiva.

*

1. Ordinary point of view. 2. Real point of view.

❀ उपयोग के भेद

उवओगो दुवियप्पो दंसणणाणं च दंसणं चदुधा ।
चक्खु अचक्खू ओही दंसणमध केवलं णेयं ॥ ४ ॥

उपयोगः द्विविकल्पः दर्शनं ज्ञानं च दर्शनं चतुर्धा ।
चक्षुः अचक्षुः अवधिः दर्शनं अथ केवलं ज्ञेयम् ॥ ४ ॥

आतम में उपयोग द्विविध है, आगम ने यह गाया है,
ज्ञान-रूप औ दर्शन-पन में, गुरुवर ने समझाया है ।
ज्ञात रहे फिर दर्शन भी वह, चउविध माना जाता है,
अचक्षु-दर्शन, चक्षु, अवधि औ केवल-दर्शन साता है ।

[उवओगो] ઉપયોગ [दुवियप्पो] બે પ્રકારનો છે [दंसणणाणं च] દર્શન અને જ્ઞાન [दंसणं] દર્શન ઉપયોગ [चदुधा] ચાર પ્રકારનો [णेयं] જાણવો – [चक्खुअचक्खूओही] ચક્ષુદર્શન, અચક્ષુદર્શન, અવધિદર્શન [अध] અને [केवलं दंसणं] કેવળ દર્શન.

उपयोग दो प्रकार का है – दर्शन और ज्ञान । उसमें दर्शनोपयोग चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन एसे चार प्रकार का जानना चाहिये ॥ ४ ॥

Upayoga is of two Kinds, Darshana[1] and Jnana[2]. Darshana is of four kinds. Darshana is known to be (divided into) Chaksu[3], Achaksu[4], Avadhi[5] and Kevala[6].

*

1. Perception of existence. 2. Knowledge. 3. Darshana through the eye. 4. Darshana through senses other than eyes. 5. Psychic perception limited by space & time and obtained directly by soul. 6. Absolute, perfect Darshana.

❀ ज्ञानोपयोग के भेद

णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदिओही अणाणणाणाणि ।
मणपज्जवकेवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेयं च ॥ ५ ॥

ज्ञानं अष्टविकल्पं मतिश्रुतावधयः अज्ञानज्ञानानि ।
मनःपर्ययः केवलं अपि प्रत्यक्षपरोक्षभेदं च ॥ ५ ॥

मति-श्रुत दो-दो और अवधि दो उलटे-सुलटे चलते हैं,
मन-पर्यय औ केवल दो यूँ ज्ञान-भेद वसु मिलते हैं ।
मति-श्रुत परोक्ष, शेष सभी हो विकल-सकल-प्रत्यक्ष रहे,
लोकालोकालोकित करते त्रिभुवन के अध्यक्ष कहें ॥ ५ ॥

[णाणं] જ્ઞાન (જ્ઞાનઉપયોગ) [अट्ठवियप्पं] આઠ પ્રકારનો છે. [मदिसुदिओहि] મતિ, શ્રુત, અવધિ [अणाणणाणाणि] જ્ઞાન અને અજ્ઞાન અને [मणपज्जव] મનઃપર્યયજ્ઞાન, [केवलं] કેવળજ્ઞાન [अवि] અને (એ જ્ઞાનોપયોગ) [पच्चक्खपरोक्खभेयं च] પ્રત્યક્ષ અને પરોક્ષ ભેદથી બે પ્રકારે છે.

कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवल, ऐसे आठ प्रकार का ज्ञान है । इनमें कुअवधि, अवधि, मनःपर्यय तथा केवल ये चार प्रत्यक्ष हैं, और शेष चार परोक्ष हैं ॥ ५ ॥

Jnana is of eight kinds, viz. Jnana and Ajnana of Mati[1], Sruta[2], and Avadhi[3], Manah-paryaya[4] and Kevala[5]. It is also divided into Pratyaksha[6] and Paroksha[7] (from another point of view).

*

1. Knowledge derived through the Senses and mind. 2. Knowledge derived through scriptures, signs, symbols mainly using mind. 3. Psychic knowledge directly acquired by the soul. 4. Knowledge which can read thoughts of others. 5. Omniscience absolute Knowledge or Knowledge unlimited as to time, space or intensity. 6. Direct Knowedge of soul. 7. Indirect knowledge of Soul using senses and mind.

❀ नय-विवक्षासे जीव का पुनः लक्षण

अट्ठ चदु णाणदंसण सामण्णं जीवलक्खणं भणियं ।
ववहारा सुद्धणया सुद्धं पुण दंसणं णाणं ॥ ६ ॥

अष्ट चतुर्ज्ञानदर्शने सामान्यं जीवलक्षणं भणितम् ।
व्यवहारात् शुद्धनयात् शुद्धं पुनः दर्शनं ज्ञानम् ॥ ६ ॥

आतम का साधारण-लक्षण वसु-चउ-विध उपयोग रहा,
गीत रहा व्यवहार गा रहा सुनो ! जरा उपयोग लगा ।
किन्तु शुद्ध-नय के नयनों में शुद्ध-ज्ञान-दर्शन वाला,
आतम प्रतिभासित होता है बुध-मुनि-मन हर्षणहारा ॥ ६ ॥

[ववहारा] વ્યવહારનયથી [अट्ठचदुणाणदंसण] આઠ પ્રકારનું જ્ઞાન અને ચાર પ્રકારનું દર્શન [सामण्णं] સામાન્યથી [जीवलक्खणं] જીવનું લક્ષણ [भणियं] કહેવામાં આવ્યું છે. [पुण] અને [सुद्धणया] શુદ્ધ નિશ્ચયનયથી [सुद्धं] શુદ્ધ [दंसणं णाणं] દર્શન અને જ્ઞાન [जीवलक्खणंभणियं] જીવનું લક્ષણ કહેવામાં આવ્યું છે.

व्यवहार नयसे आठ प्रकार के ज्ञान और चार प्रकार के दर्शन का जो धारक है वह सामान्य रूप से जीव का लक्षण है, और शुद्धनय की अपेक्षा जो शुद्ध ज्ञान-दर्शन है वह जीव का लक्षण कहा गया है ।

According to Vyavahara Naya, the general characteristics of Jiva are said to be eight kinds of Jnana and four kind of Darshana[1]. But according to Suddha Naya[2], (the characteristic of Jiva) are pure Jnana and Darshana.

*

1. Knowledge having eight facets & Darshana having four facets is the interpretion of Vyavahara Naya. 2. Suddha Nischay Naya.

❀ जीव का मूर्तिक और अमूर्तिक रूप

वण्ण रस पंच गंधा दो फासा अट्ठ णिच्छया जीवे ।
णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बंधादो ॥ ७ ॥

वर्णाः रसाः पंच गन्धौ द्वौ स्पर्शाः अष्टौ निश्चयात् जीवे ।
नो सन्ति अमूर्तिः ततः व्यवहारात् मूर्ति बन्धतः ॥ ७ ॥

पञ्च रूप, रस पञ्च, गन्ध दो, आठ-स्पर्श, सब ये जिन में,
होते ना हैं, 'जीव' वही है कथन किया है यूँ जिन-ने ।
इसीलिए हैं जीव अमूर्तिक निश्चय-नय ने माना है,
जीव, मूर्त व्यवहार बताता कर्म-बन्ध का बाना है ॥ ७ ॥

[णिच्छया] નિશ્ચયનયથી [जीवे] જીવમાં [वण्ण रस पंच] પાંચ વર્ણ, પાંચ રસ, [गंधा दो] બે ગંધ અને [फासा अट्ठ] આઠ સ્પર્શ [णो संति] હોતા નથી. [तदो] તેથી જીવ [अमुत्ति] અમૂર્તિક છે, [ववहारा] વ્યવહારનયથી [बंधादो] કર્મબંધથી અપેક્ષાએ [मुत्ति] જીવ મૂર્તિક છે.

निश्चय नय से जीव में पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श नहीं हैं, इसलिये जीव अमूर्तिक है और व्यवहार नयकी अपेक्षा कर्म-बंध होने के कारण जीव मूर्तिक है ॥ ७ ॥

According to Nischaya Naya, Jiva is without form, because the five kinds of colour and taste, two kinds of smell, and eight kinds of touch are not present in it. But according to Vyavahara Naya [Jiva] has form through the bondage (of Karma).

*

आदिम तीर्थंकर प्रभो, आदिनाथ मुनिनाथ ।
आधि व्याधि अघ मद मिटे, तुम पदमें मम माथ ॥

❀ जीव का कर्तृत्व

पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णिच्छयदो ।
चेदणकम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥ ८ ॥

पुद्गलकर्मादीनां कर्ता व्यवहारतः तु निश्चयतः ।
चेतनकर्म्मणां आत्मा शुद्धनयात् शुद्धभावानाम् ॥ ८ ॥

पुद्गल कर्मादिक का कर्त्ता जीव रहा व्यवहार रहा,
रागादिक चेतन का कर्ता अशुद्ध-नय से क्षार रहा ।
विशुद्ध-नय से शुद्ध-भावका कर्त्ता कहते सन्त सभी,
शुद्ध-भाव का स्वागत कर लो, कर लो भव का अन्त अभी ॥ ८ ॥

[आदा] આત્મા [ववहारदो] વ્યવહારનયથી [पुग्गलकम्मादीणं] (જ્ઞાનાવરણાદિ) પુદ્ગલકર્મનો [कत्ता] કર્તા છે, [णिच्छयदो] (અશુદ્ધ) નિશ્ચયનયથી [चेदणकम्माणं] (રાગાદિ ભાવકર્મ) ચેતનકર્મોનો કર્તા છે. [दु] અને [सुद्धणया] શુદ્ધ (નિશ્ચય) નયથી [सुद्धभावाणं] (શુદ્ધ જ્ઞાન-દર્શનાદિ) શુદ્ધ ભાવોનો કર્તા છે.

आत्मा व्यवहारनयसे पुद्गल कर्म आदि का कर्ता है, निश्चयनयसे चेतनकर्म का कर्ता है और शुद्धनय की अपेक्षा से शुद्ध भावों का कर्त्ता है ॥ ८ ॥

According to Vyavahara Naya Jiva is the doer of the Pudgala Karmas. According to Nischaya Naya[1] (Jiva is the doer of) Thought Karmas[2]. Accordirg to Suddha Naya Jiva is the doer of Suddha Bhavas[3].

*

1. Impure Nischaya Naya 2. Attachment, aversion etc. 3. Suddha Jnana, Suddha Darshana etc.

❀ जीव का भोक्तृत्व

ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मफलं पभुंजेदि ।
आदा णिच्छयणयदो चेदणभावं खु आदस्स ॥ ९ ॥

व्यवहारात् सुखदुःखं पुद्गलकर्मफलं प्रभुङ्क्ते ।
आत्मा निश्चयनयतः चेतनभावं खलु आत्मनः ॥ ९ ॥

आतम को कृत-कर्मों का फल सुख-दुख मिलता रहता है,
जिसका वह व्यवहार-भाव से भोक्ता बनता रहता है ।
किन्तु निजी शुचि चेतन-भावों का भोक्ता यह आतम है,
निश्चय-नय की यही दृष्टि है कहता यूँ परमागम है ॥ ९ ॥

[आदा] આત્મા [ववहारा] વ્યવહારનયથી [सुहदुक्खं] સુખ-દુઃખરૂપ [पुग्गलकम्मफलं] પુદ્ગલ કર્મનું ફળ [पभुंजेदि] ભોગવે છે અને [णिच्छयणयदो] નિશ્ચયનયથી [आदस्स] પોતાનાં [चेदणभावं] (જ્ઞાનદર્શનરૂપ) ચૈતન્યભાવને [खु] નિયમથી [पभुंजेदि] ભોગવે છે.

व्यवहार नयसे आत्मा सुख दुःखरूप पुद्गल कर्मों को भोगता है और निश्चयनय से अपने चेतन स्वभाव को भोगता है ॥ ९ ॥

According to Vyavahara Naya, Jiva enjoys happiness and misery the fruits of Pudgal Karmas. According to Nischaya Naya, Jiva has conscious Bhavas[1] Only.

*

1. Suddha Jnana, Suddha Darshana...etc.

शरण, चरण हैं आपके, तारण तरण जहाज ।
भव-दधि-तट तक ले चलो, करुणाकर जिनराज ॥

❋ जीव का प्रमाण

अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा ।
असमुहदो ववहारा णिच्छयणयदो असंखदेसो वा ॥ १० ॥

अणुगुरुदेहप्रमाणः उपसंहारप्रसर्पतः चेतयिता ।
असमुद्घातात् व्यवहारात् निश्चयनयतः असंख्यदेशो वा ॥ १० ॥

समुद्घात बिन सिकुडन-प्रसरण स्वभाव को जो धार रहा,
लघु-गुरु तन के प्रमाण होता 'जीव' यही व्यवहार रहा ।
स्वभाव से तो जीवात्मा में असंख्यात-परदेश रहे,
निश्चय-नय का यही कथन है सन्तों के उपदेश रहे ॥ १० ॥

[चेदा] आत्मा [ववहारा] વ્યવહારનયથી [असमुहदो] સમુદ્ઘાત અવસ્થાને છોડીને અન્ય અવસ્થાઓમાં [उवसंहारप्पसप्पदो] સંકોચ અને વિસ્તારનાં કારણે [अणुगुरुदेहपमाणो] નાના-મોટા શરીર પ્રમાણમાં રહે છે; [वा] અને [णिच्छयणयदो] નિશ્ચયનયથી [असंखदेसो] અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો છે.

समुद्रघात के बिना यह जीव व्यवहार-नय से संकोच तथा विस्तार से अपने छोटे और बड़े शरीर के प्रमाण रहता है और निश्चयनय से असंख्यात प्रदेशों का धारक है ॥ १० ॥

According to Vyavahara Naya, the conscious Jiva, being without Samudghata (the exit of Jiva from the body to another form, without leaving the original body altogether), becomes equal in extent to a small or a large body, by its ability of contraction and expansion; but according to Nischaya Naya (it) is existent in innumerable Pradesas[1]. ❋

1. That portion of Akasa which is occupied by one indivisible atom).

❋ जीव के भेद

पुढविजलतेयवाऊ वणप्फदी विविहथावरेइंदी ।
विगतिगचदुपंचक्खा तसजीवा होंति संखादी ॥ ११ ॥

पृथिवीजलतेजोवायुवनस्पतयः विविधस्थावरैकेन्द्रियाः ।
द्विकत्रिकचतुःपञ्चाक्षाः त्रसजीवाः भवन्ति शंखादयः ॥ ११ ॥

पृथवी-जल-अगनी-कायिक औ वायु-वृक्ष-कायिक सारे,
बहुविध 'स्थावर' कहलाते हैं मात्र एक-इन्द्रिय धारे ।
द्वय-तिय-चउ-पञ्चेन्द्रिय-धारक 'त्रस-कायिक' प्राणी जाने,
भव-सागर में भ्रमण कर रहे कीट-पतंगे मन माने ॥ ११ ॥

[पुढविजलतेयवाऊवणप्फदी] પૃથ્વીકાય, જલકાય, અગ્નિકાય, વાયુકાય અને વનસ્પતિકાય [विविहथावरेइंदि] અનેક પ્રકારનાં સ્થાવર એકેન્દ્રિય જીવ છે અને [संखादि] શંખાદિ [विगतिगचदुपंचक्खा] બેઇન્દ્રિય, તેઇન્દ્રિય, ચૌરેન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય [तसजीवा] ત્રસ જીવ [होंति] હોય છે.

पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति इन भेदों से नाना प्रकार के स्थावर जीव हैं और ये सब एक स्पर्शन इन्द्रिय के ही धारक हैं, तथा शंख आदि दो, तीन, चार और पाँच इन्द्रियों के धारक त्रसजीव होते हैं ॥ ११ ॥

The earth, water, fire, air and plants are various kinds of sthavara[1] possessed of one sense (i.e. touch) and conches... etc. are Trasa[2] Jivas, are possessed of two, three, four and five senses.

❋

1. Immobile, not capable of spontaneous movement in case of trouble... etc. 2. Mobile, capable of spontaneous movement in case of trouble...etc.

❀ चौदह जीवसमास

समणा अमणा णेया पंचिंदिय णिम्मणा परे सव्वे ।
बादरसुहमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदरा य ॥ १२ ॥

समनस्काः अमनस्काः ज्ञेयाः पञ्चेन्द्रियाः निर्मनस्काः परे सर्वे ।
बादरसूक्ष्मैकेन्द्रियाः सर्वे पर्याप्ताः इतरे च ॥ १२ ॥

द्विविध रहे हैं 'पञ्चेन्द्रिय' भी रहित-मना औ सहित-मना,
शेष जीव सब रहित-मना हैं कहते इस विध विजित-मना ।
स्थावर, बादर-सूक्ष्म द्विविध हैं, दुख से पीडित हैं भारी,
फिर सब ये पर्याप्त तथा हैं पर्याप्तेतर संसारी ॥ १२ ॥

[पंचिंदिय] પંચેન્દ્રિય જીવ [समणा] સંજ્ઞી (મન સહિત) અને [अमणा] અસંજ્ઞી (મનરહિત) [णेया] જાણવા જોઈએ [परे] શેષ [सव्वे] બધા (જીવો) [णिम्मणा] અસંજ્ઞી [णेया] જાણવા; તેમાં [एइंदि] એકેન્દ્રિય જીવ [बादरसुहमा] બાદર અને સૂક્ષ્મ એમ બે પ્રકારનાં છે. [सव्वे] અને તે બધા [पज्जत्त] પર્યાપ્તક [इदरा य] અને અપર્યાપ્તક હોય છે.

पंचेन्द्रिय जीव संज्ञी और असंज्ञी ऐसे दो तरह के जानने चाहिये शेष सब (एकेन्द्रिय, दो-इन्द्रिय, ते-इन्द्रिय, चौ-इन्द्रिय) जीव मनरहित असंज्ञी हैं । एकेन्द्रिय जीव बादर और सूक्ष्म दो प्रकार के हैं । और ये सातों जीव पर्याप्त तथा अपर्याप्त होते हैं । इस तरह जीवसमास १४ हैं ॥ १२ ॥

Jivas possessing five senses are known to be divided into Samana[1] and Amana[2]. All the rest are Amana. Jivas having one sense are divided into two classes Badara[3] and Suksama.[4] All of these Jivas are seen to be Paryapta[5] and Aparyapta.[6] ✻

1. Samana – Sanjni, those having mind. 2. Asanjni, those without mind. 3. Gross, visible through naked eyes. 4. Subtle, not visible through naked eyes. 5. One who will complete his requirements. 6. One who will not complete his requirements.

❀ मार्गणा और गुणस्थानकी अपेक्षा जीव के भेद

मग्गणगुणठाणेहि य चउदसहि हवंति तह असुद्धणया ।
विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया ॥ १३ ॥

मार्गणागुणस्थानैः च चतुर्दशभिः भवन्ति तथा अशुद्धनयात् ।
विज्ञेयाः संसारिणः सर्वे शुद्धाः खलु शुद्धनयात् ॥ १३ ॥

तथा मार्गणाओं में चौदह गुणथानों में मिलते हैं,
अशुद्ध-नय से प्राणी-भव में युगों-युगों से फिरते हैं ।
किन्तु सिद्ध-सम विशुद्ध-तम हैं सभी जीव ये अविकारी,
विशुद्ध-नय का विषय यही है विषय त्याग दे अधकारी ॥ १३ ॥

[तह] તથા [संसारी] સંસારી જીવ [असुद्धणया] અશુદ્ધનયથી (વ્યવહારનયથી) [मग्गणगुणठाणेहि य] માર્ગણાસ્થાન અને ગુણસ્થાનની અપેક્ષાથી [चउदसहि] ચૌદ ચૌદ પ્રકારનાં [हवंति] હોય છે. [सुद्धणया] શુદ્ધ નિશ્ચયનયથી [सव्वे] બધા જીવ [हु] નિયમથી [सुद्ध] શુદ્ધ [विण्णेया] જાણવા.

संसारी जीव अशुद्धनय की दृष्टि से चौदह मार्गणा तथा चौदह गुणस्थानों से चौदह-चौदह प्रकार के होते हैं और शुद्धनय से सभी संसारी जीव शुद्ध हैं ॥ १३ ॥

Again according to impure (Vyavahara) Naya Samsari[1] Jivas are of fourteen kinds according to Margana[2] and Gunasthana[3]. According to pure (Nischaya) Naya all Jivas should be understood to be pure.

✻

1. Unliberated. 2. States or conditions in which Jivas are found. 3. The gradual Stages of development of soul with reference to delusion and yoga (activity).

❀ सिद्धों का स्वरूप

णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा ।
लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवएहिं संजुत्ता ॥ १४ ॥

निष्कर्म्माणः अष्टगुणाः किञ्चिदूनाः चरमदेहतः सिद्धाः ।
लोकाग्रस्थिताः नित्याः उत्पादव्ययाभ्यां संयुक्ताः ॥ १४ ॥

अष्ट-कर्म से रहित हुये हैं अष्ट-गुणों से सहित हुये,
अन्तिम तन से कुछ कम आकृति ले अपने में निहित हुये ।
तीन-लोक के अग्र-भाग पर सहज-रूप से निवस रहें,
उदय-नाश-ध्रुव स्वभाव युत हो शुद्ध-'सिद्ध' हो दिवस रहें ॥ १४ ॥

[णिक्कम्मा] જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મોથી રહિત, [अट्ठगुणा] સમ્યક્ત્વાદિ આઠ ગુણોથી સહિત, [चरमदेहदो] અન્તિમ શરીરથી [किंचूणा] કંઈક ન્યૂન [णिच्चा] નિત્ય [उप्पादवएहिं] ઉત્પાદ અને વ્યયથી [संजुत्ता] સંયુક્ત [लोयग्गठिदा] લોકનાં અગ્રભાગે સ્થિત [सिद्धा] સિદ્ધ હોય છે.

जो ज्ञानावरणादि आठ कर्मों से रहित हैं, सम्यक्त्व आदि आठ गुणों के धारक हैं और अन्तिम शरीर से कुछ कम आकारवाले हैं, वे सिद्ध हैं और ऊर्ध्वगमन स्वभाव के कारण लोक के अग्रभाग में स्थित हैं, नित्य हैं तथा उत्पाद, व्यय से युक्त हैं ॥ १४ ॥

The siddhas[1] are free from the bondage of all Karmas, possessed of eight qualities, slightly less than the final body, eternal, possessed of utpada[2] and vyaya[3] and permanently existent at the summit of loka[4].

*

1. Liberated souls. 2. Origination or generation. 3. destruction. 4. The part of Space where all six substances exist.

❀ अजीवद्रव्यों के नाम और उनके मूर्तिक-अमूर्तिकपने का वर्णन

अज्जीवो पुण णेओ पुग्गलधम्मो अधम्म आयासं ।
कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा हु ॥ १५ ॥

अजीवः पुनः ज्ञेयः पुद्गलः धर्मः अधर्मः आकाशम् ।
कालः पुद्गलः मूर्त्तः रूपादिगुणः अमूर्त्ताः शेषाः तु ॥ १५ ॥

पुद्गल-अधर्म-धर्म-काल-नभ-पाँच-द्रव्य इन को मानो,
चेतनता से दूर रहें ये 'अजीव' तातैं पहिचानो ।
रूपादिक गुण धारण करता मूर्त-द्रव्य 'पुद्गल' नाना,
शेष द्रव्य हैं अमूर्त, क्यों फिर मूर्तों पर मन मचलाना ? ॥ १५ ॥

[पुणं] વળી [पुग्गल] પુદ્ગલ [धम्मो] ધર્મ, [अधम्म] અધર્મ, (आयासं) આકાશ અને [कालो] કાળ એને [अज्जीवो] અજીવ [णेओ] જાણવા, [रूवादिगुणो] રૂપાદિ ગુણોથી યુક્ત [पुग्गल] પુદ્ગલ [मुत्तो] મૂર્તિક છે [सेसा दु] અને બાકીનાં દ્રવ્યો [अमुत्ति] અમૂર્તિક છે.

पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये अजीव द्रव्य जानने चाहिये ! इनमें रूप आदि गुणों का धारक पुद्गल तो मूर्तिमान है और शेष चारों द्रव्य अमूर्तिक हैं ॥ १५ ॥

Again Ajivas should be known to be Pudgala[1], Dharma[2], Adharma[3], Akasa[4] and Kala[5]. Pudgala has form and the qualities colour, smell..etc. and the rest are without form.

*

1. Matter with nature of formation of deformation. 2. The principle or fulcrum of motion. 3. The principle of stationariness or the fulcrum of rest. 4. Space. 5. Time.

❀ पुदगल-द्रव्य की पर्यायें

सद्दो बंधो सुहुमो थूलो संठाणभेदतमछाया ।
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ॥ १६ ॥

शब्दः बन्धः सूक्ष्मः स्थूलः संस्थानभेदतमश्छायाः ।
उद्योतातपसहिताः पुद्गलद्रव्यस्य पर्यायाः ॥ १६ ॥

टूटन-फूटन रूप भेद औ सूक्ष्म-स्थूलता आकृतियाँ,
श्रवणेन्द्रिय के विषय-शब्द भी प्रतिछवि छाया या कृतियाँ ।
चन्द्र, चाँदनी, रवि का आतप अन्धकार आदिक समझो,
'पुद्गल'की ये पर्यायें हैं पर्यायों में मत उलझो ॥ १६ ॥

[सद्दो] शब्द, [बंधो] બંધ, [सुहुमो] सूक्ष्म, [थूलो] स्थूल, [संठाण] આકાર, [भेद] ખંડ (ટુકડા), [तम] અંધકાર, [छाया] છાયા, [उज्जोद] ઉદ્યોત [आदव-सहिया] અને આતાપ સહિત [पुग्गल-दव्वस्स] પુદ્ગલ દ્રવ્યની [पज्जाया] પર્યાયો છે.

शब्द, बन्ध, सूक्ष्म, स्थूल, संस्थान, भेद, तम, छाया, उद्योत और आतप सहित सब पुद्गल द्रव्य की पर्यायें हैं ॥ १६ ॥

Sound, union[1], fineness, grossness, shape, division, darkness, image, Atapa[2] and udhyota[3] are modifications of the substance known as Pudgala.

*

1. Bondage 2. Heat & light caused by sun. 3. Light resulting from the moon, fire-fiy, jewel...etc. things which are not hot or without heat.

जित-इन्द्रिय जित-मद बने, जित-भव विजित-कषाय ।
अजित-नाथ को नित नमूँ, अर्जित दुरित पलाय ॥

❀ धर्म-द्रव्य का स्वरूप

गइपरिणयाण धम्मो पुग्गलजीवाणं गमणसहयारी ।
तोयं जह मच्छाणं अच्छंताणेव सो णेई ॥ १७ ॥

गतिपरिणतानां धर्मः पुद्गलजीवानां गमनसहकारी ।
तोयं यथा मत्स्यानां अगच्छतां नैव सः नयति ॥ १७ ॥

गमन-कार्य में निरत रहे जब जीव तथा पुद्गल-भाई,
'धर्म-द्रव्य' तब बने सहायक प्रेरक बनता पर नाही ।
मीन तैरती सरवर में जब जल बनता तब सहयोगी,
रुकी मीन को गति न दिलाता उदासीन भर हो, योगी ! ॥ १७ ॥

[जह] જેવી રીતે [गइपरिणयाण] ગતિ કરતી [मच्छाणं] માછલીઓને [गमणसहयारी] ગમન કરવામાં સહાયક [तोयं] પાણી થાય છે [तह] તેવી રીતે, [गइपरिणयाण] ગતિ કરતાં [पुग्गलजीवाण] જીવ અને પુદ્ગલને [गमणसहयारी] ગમન (ચાલવામાં) કરવામાં સહાયક [धम्मो] ધર્મદ્રવ્ય છે, પણ [सो] તે ધર્મદ્રવ્ય [अच्छंता] નહીં ચાલવાવાળાને (જીવ-પુદ્ગલને) (णेव णेइ) ચલાવતું નથી.

गमन में परिणत पुद्गल और जीवों को गमन में सहकारी धर्मद्रव्य है, जैसे जल मछलियों को गमन में सहकारी है । गमन करते हुए यानी – ठहरे हुए पुद्गल और जीवों को धर्मद्रव्य गमन नहीं कराता ॥ १७ ॥

As water assists the movement of moving fish, Dharma assists the movement of moving Jiva and Pudgala. But it does not move Jiva and Pudgala which are not moving.

*

❀ अधर्म-द्रव्य का स्वरूप

ठाणजुदाण अधम्मो पुग्गलजीवाण ठाणसहयारी ।
छाया जह पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई ॥ १८ ॥

स्थानयुतानां अधर्म्मः पुद्गलजीवानां स्थानसहकारी ।
छाया यथा पथिकानां गच्छतां नैव सः धरति ॥ १८ ॥

किसी थान में रुकते हों जब जीव तथा पुद्गल भाई,
'अधर्म' उसमें बने सहायक प्रेरक बनता पर नाही ।
रुकने वाले पथिकों को तो छाया कारण बनती है,
चलने वालों को न रोकती उदासीनता ठनती है ॥ १८ ॥

[जह] જેવી રીતે [छाया] છાયા [ठाणजुदाण] સ્થિર થયેલાં [पहियाणं] મુસાફરોને [ठाणसहयारी] સ્થિર રહેવામાં સહકારી થાય છે [तह] તેવી રીતે [पुग्गलजीवाण] પુદ્ગલ અને જીવોને (સ્થિર રહેવામાં સહકારી) [अधम्मो] અધર્મદ્રવ્ય છે પણ [सो] તે અધર્મદ્રવ્ય [गच्छंता] ચાલવાવાળા જીવ અને પુદ્ગલદ્રવ્યોને [णेव धरई] રોકી રાખતું નથી.

ठहरे हुए पुद्गल और जीवों को ठहरने में सहकारी कारण अधर्म द्रव्य है । जैसे छाया यात्रियों को ठहरने में सहकारी है । गमन करते हुए जीव तथा पुद्गलों को अधर्म द्रव्य नहीं ठहराता ॥ १८ ॥

As shadow assists the staying of travellers, Adharma substance assists the staying of the pudgalas and Jivas which are stationary. But it doesn't hold back moving Jiva and Pudgala.

*

कोंपल पल-पल कों पले, वन में ऋतु-पति आय ।
पुलकित मम जीवन-लता, मन में जिन पद पाय ॥

❀ आकाश-द्रव्य का स्वरूप

अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं ।
जेण्हं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं ॥ १९ ॥

अवकाशदानयोग्यं जीवादीनां विजानीहि आकाशम् ।
जैनं लोकाकाशं अलोकाकाशं इति द्विविधम् ॥ १९ ॥

योग्य रहा अवकाश दान में जीवादिक सब द्रव्यों को,
वही रहा 'आकाश-द्रव्य' है समझाते जिन, भव्यों को ।
दो भागों में हुआ विभाजित बिना किसी से वह भाता,
एक ख्यात है लोक-नाम से अलोक न्यारा कहलाता ॥ १९ ॥

[जीवादीणं] જીવ આદિ દ્રવ્યોને [अवगासदाणजोग्गं] અવકાશ આપવા યોગ્ય [जेण्हं] જિનેન્દ્ર ભગવાને કહેલું [आयासं] આકાશ-દ્રવ્ય [वियाण] જાણવું. આ આકાશદ્રવ્ય [लोगागासं] લોકાકાશ અને [अल्लोगागासं] અલોકાકાશ [इदि] એમ [दुविहं] બે પ્રકારનું છે.

जो जीव आदि द्रव्यों को अवकाश देने वाला है उसको जिनेन्द्रदेव द्वारा कहा हुआ आकाश द्रव्य जानो । लोकाकाश और अलोकाकाश इन भेदों से वह आकाश दो प्रकार का है ॥ १९ ॥

Know that which is capable of allowing space to Jiva...etc., to be 'Akasa'[1] as told by the Jinendradeva (Tirthankara). This Akasa is of two kinds Lokakasa and Alokakasa.

*

1. That which allows space to other substances.

तुम-पद-पंकज से प्रभो, झर-झर-झरी पराग ।
जब तक शिव-सुख ना मिले, पीऊँ षट्पद जाग ॥

❀ आकाश-द्रव्य के भेद

धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये ।
आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्ति ॥ २० ॥

धर्माधर्मौ कालः पुद्गलजीवाः च सन्ति यावतिके ।
आकाशे सः लोकः ततः परतः अलोकः उक्तः ॥ २० ॥

जीव-द्रव्य औ अजीव-पुद्गल काल-द्रव्य आदिक सारे,
जहाँ रहें बस 'लोक' वही है लोक पूज्य जिन-मत प्यारे ।
तथा लोक के बाहर, केवल फैला जो आकाश रहा,
'अलोक' वह है केवल दर्पण में लेता अवकाश रहा ॥ २० ॥

[जावदिये] જેટલાં [आयासे] આકાશમાં [धम्माधम्मा] ધર્મ, અધર્મ [कालो] કાળ [य] અને [पुग्गलजीवा] પુદ્ગલ અને જીવ [संति] છે, [सो] તે [लोगो] લોકાકાશ છે, [तत्तो] લોકાકાશથી [परदो] બહાર છે તે [अलोगुत्तो] અલોકાકાશ કહેવામાં આવે છે.

धर्म, अधर्म, काल, पुद्गल और जीव ये पाँचों द्रव्य जितने आकाश में हैं, वह "लोकाकाश" है और उस लोकाकाश के बाहर अलोकाकाश है ॥ २० ॥

Lokakasa is that in which Dharma, Adharma, Kala, Pudgala and Jiva exist. That which is beyond this Lokakasa is called Alokakasa.[1].

*

1. Empty space, where no other substance exists.

भव-भव, भव-वन भ्रमित हो, भ्रमता-भ्रमता आज ।
संभव-जिन भव शिव मिले, पूर्ण हुआ मम काज ॥

❀ कालद्रव्य का स्वरूप व उसके दो भेद

दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो ।
परिणामादीलक्खो वट्टणलक्खो य परमट्ठो ॥ २१ ॥

द्रव्यपरिवर्तनरूपः यः सः कालः भवेत् व्यवहारः ।
परिणामादिलक्ष्यः वर्तनालक्षणः च परमार्थः ॥ २१ ॥

जीव तथा पुद्गल-पर्यायों की स्थिति अवगत जिससे हो,
लक्षण वह 'व्यवहार-काल'का परिणामादिक जिसके हो ।
तथा वर्तना-लक्षण जिसका 'काल' रहा परमार्थ वही,
समझ काल को उदासीन, पर वर्णन का फलितार्थ यही ॥ २१ ॥

[जो] જે [दव्वपरिवट्टरूवो] દ્રવ્યનાં (જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ આદિ) પરિવર્તનમાં (મિનિટ, કલાક, માસ... વગેરે રૂપ છે) કારણ છે અને [परिणामादीलक्खो] પરિણમન આદિ લક્ષણોથી જાણી શકાય છે [सो] તે [ववहारो] વ્યવહારકાળ છે [य] અને [वट्टणलक्खो] વર્તના લક્ષણવાળો [परमट्ठो] પરમાર્થકાળ (નિશ્ચયકાળ) છે.

जो द्रव्यों के परिवर्तन में सहायक, परिणामादि रूप है, वह व्यवहारकाल है और वर्तना-लक्षणवाला जो काल है वह निश्चयकाल है ॥ २१ ॥

Vyavahara Kala[1] is that which helps to produce changes in substances and which is known from modifications[2] while Parmarthik (Nischaya) Kala is characterised by Vartana[3].

*

1. Time from the ordinary point of view eg. day, week, minute... etc. 2. produced in substances. 3. Continuity.

❀ निश्चय-काल का स्वरूप

लोयायासपदेसे इक्किक्के जे ठिया हु इक्किक्का ।
रयणाणं रासी इव ते कालाणू असंखदव्वाणि ॥ २२ ॥

लोकाकाशप्रदेशे एकैकस्मिन् ये स्थिताः हि एकैकाः ।
रत्नानां राशिः इव ते कालाणवः असंख्यप्रव्याणि ॥ २२ ॥

इक-इक इस आकाश-देश में इक-इक कर ही काल रहा,
रतनों की वह राशि यथा हो फलतः अणु, अणु-काल कहा ।
परिगणनायें ये सब मिलकर अनन्त ना, पर अनगिन हैं,
स्वभाव से तो निष्क्रिय इन को कौन देखतें, बिन जिन हैं ? ॥ २२ ॥

[इक्किक्के] એક એક [लोयायासपदेसे] લોકાકાશનાં પ્રદેશ ઉપર [जे] જે [रयणाणं] રત્નોની [रासी इव] રાશિ અર્થાત્ ઢગલાની સમાન [इक्किक्का] એક-એક [कालाणू] કાળદ્રવ્યના અણુઓ [ठिया] સ્થિત છે [ते] તે કાલાણુઓ [हु] નિશ્ચયથી [असंखदव्वाणि] અસંખ્યાત દ્રવ્ય છે.

जो लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर रत्नों के ढेर समान परस्पर भिन्न होकर एक एक स्थित हैं, वे कालाणु असंख्यात द्रव्य हैं ॥ २२ ॥

Those innumerable substances which exist one by one on each pradesa of Lokakasa, like heaps of jewels, are kalanu[1].

*

1. Points of time.

विषयों को विष लख तजूँ, बनकर विषयातीत ।
विषय बना ऋषि-ईश को, गाऊँ उनका गीत ॥

❀ पाँच अस्तिकाय

एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददो दव्वं ।
उत्तं कालविजुत्तं णादव्वा पंच अत्थिकाया दु ॥ २३ ॥

एवं षड्भेदं इदं जीवाजीवप्रभेदतः द्रव्यम् ।
उक्तं कालवियुक्तं ज्ञातव्याः पञ्च अस्तिकायाः तु ॥ २३ ॥

जीव-भेद से अजीव-पन से द्रव्य मूल में द्विविध रहा,
धर्मादिक वश षड्विध हो फिर उपभेदों से विविध रहा ।
किन्तु काल तो अस्तिकायपन से वर्जित ही माना है,
शेष द्रव्य हैं अस्तिकाय यूँ "ज्ञानोदय" का गाना है ॥ २३ ॥

[एवं] આ પ્રમાણે [जीवाजीवप्पभेददो] જીવ અને અજીવના ભેદોથી [इदं] આ [दव्वं] દ્રવ્ય [छब्भेयं] છ પ્રકારે [उत्तं] કહેવામાં આવ્યા છે. [दु] અને તેમાં [कालविजुत्तं] કાળદ્રવ્ય સિવાય [पंच अत्थिकाया] પાંચ અસ્તિકાય [णादव्वा] જાણવા.

इस तरह जीव और अजीव द्रव्य के प्रभेदरूप छह प्रकार के द्रव्यों का निरुपण किया । इन छह द्रव्यों में से कालद्रव्य के बिना शेष पांच द्रव्य अस्तिकाय जानने चाहियें ॥ २३ ॥

In this manner this Dravya (substance) is said to be of six kinds, is subdivided in two kinds Jiva & Ajiva. The five, without Kala, should be understood to be Astikayas.[1]

*

1. One which has many Pradesas.

गुण धारे पर मद नहीं, मृदुतम हो नवनीत ।
अभिनन्दन जिन ! नित नमूँ, मुनि बन मैं भवभीत ॥

❀ अस्तिकाय का लक्षण

संति जदो तेणेदे अत्थित्ति भणंति जिणवरा जह्मा ।
काया इव बहुदेसा तह्मा काया य अत्थिकाया य ॥ २४ ॥

सन्ति यतः तेन एते अस्ति इति भणन्ति जिनवराः यस्मात् ।
काया इव बहुदेशाः तस्मात् कायाः च अस्तिकायाः च ॥ २४ ॥

चिर से हैं ये सारे चिर तक इनका होना नाश नहीं,
इन्हें इसी से 'अस्ति' कहा है जिन-ने, जिनमें त्रास नहीं ।
काया के सम बहु-प्रदेश जो धारे उनको 'काय' कहा,
तभी अस्ति औ काय मेल से 'अस्तिकाय' कहलाय यहाँ ॥ २४ ॥

[जदो] જેથી કરીને [एदे] આ (જીવાદિ છ) દ્રવ્ય [संति] સદા વિદ્યમાન રહે છે [तेण] તેથી [जिणवरा] જિનેન્દ્રદેવ [अत्थित्ति] 'અસ્તિ' એમ [भणंति] કહે છે [य] અને [जम्हा] જેથી કરીને [काया इव] શરીરની સમાન [बहुदेसा] ઘણા પ્રદેશવાળા છે [तम्हा] તેથી [काया] 'કાય' કહેવાય છે [य] અને [अत्थिकाया] ભેગા મળીને અસ્તિકાય કહેવાય છે.

जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश ये पाँचों द्रव्य विद्यमान हैं इसलिए जिनेश्वर इनको 'अस्ति' (है) ऐसा कहते हैं और ये शरीर के समान बहुप्रदेशी हैं इसलिए इनको 'काय' कहते है । अस्ति तथा काय दोनों को मिलाने से ये पाँचों 'अस्तिकाय' होते हैं ॥ २४ ॥

As these (five substances) exist, they are called 'Asti' by the great Jinas, and because they have many pradesas, like bodies therefore they are called kayas. Hence they are called 'Astikayas'

*

❀ द्रव्यों के प्रदेशों की संख्या

होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे ।
मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ ॥ २५ ॥

भवन्ति असंख्याः जीवे धर्माधर्मयोः अनन्ताः आकाशे ।
मूर्त्ते त्रिविधाः प्रदेशाः कालस्य एकः न तेन सः कायः ॥ २५ ॥

एक जीव में नियम रूप से असंख्यात-परदेश रहे,
धर्म-द्रव्य औ अधर्म भी वह उतने ही परदेश गहे ।
अनन्त नभ में, पर पुद्गल में संख्यासंख्यानन्त रहे,
एक 'काल'में तभी काल ना काय रहा, अरहन्त कहें ॥ २५ ॥

[जीवे] એક જીવમાં [धम्माधम्मे] ધર્મ અને અધર્મ દ્રવ્યોમાં [असंखा] અસંખ્યાત [आयासे] આકાશદ્રવ્યમાં [अणंत] અનંત [मुत्ते] પુદ્ગલ દ્રવ્યમાં [तिविह] ત્રણ પ્રકારનાં સંખ્યાત, અસંખ્યાત અને અનંત [पदेसा] પ્રદેશો [होंति] હોય છે [कालस्स] કાળદ્રવ્યનો [एगो] એક પ્રદેશ છે [तेण] તેથી [सो] તે કાળદ્રવ્ય [काओ] કાય અર્થાત્ બહુપ્રદેશી [ण] નથી.

एक जीव, धर्म तथा अधर्म द्रव्य में असंख्यात प्रदेश हैं और आकाश में अनन्त हैं । पुद्गल में संख्यात, असंख्यात तथा अनन्त प्रदेश है और काल के एक ही प्रदेश है इसलिये काल 'काय' नहीं है ॥ २५ ॥

In Jiva, Dharma and Adharma, the pradesas are innumerable in Akasa (the pradesas are) infinite and in that which has form (viz. Pudgala) Pradesas are of three kinds (viz. numerable, innumerable and infinite). Kala (Time) has one Pradesa. Therefore, it is not called 'kaya.'

*

❀ प्रदेश का लक्षण

एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि ।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु ॥ २६ ॥

एकप्रदेशः अपि अणुः नानास्कन्धप्रदेशतः भवति ।
बहुदेशः उपचारात् तेन च कायः भणन्ति सर्वज्ञाः ॥ २६ ॥

प्रदेश इक ही पुद्गल-अणु में यद्यपि हमको है मिलता,
रूखे-चिकने स्वभाव के वश नाना-स्कन्धों में ढलता ।
होता बहुदेशी इस विध अणु यही हुआ उपचार यहाँ,
सर्वज्ञों ने अस्तिकाय फिर उसे कहा श्रुत-धार यहाँ ॥ २६ ॥

[एयपदेसो वि] એક પ્રદેશવાળો હોવા છતાં [अणू] પુદ્ગલ પરમાણુ [णाणाखंधप्पदेसदो] વિવિધ સ્કંધરૂપ પ્રદેશવાળો થતો હોવાને કારણે [बहुदेसो] બહુપ્રદેશી [होदि] થાય છે [य] અને [तेण] તે કારણથી [सव्वण्हु] સર્વજ્ઞદેવ પુદ્ગલપરમાણુને [उवयारा] ઉપચારથી [काओ] કાય અર્થાત્ બહુપ્રદેશી [भणंति] કહે છે.

एक प्रदेशी भी परमाणु अनेक स्कन्धरूप बहुप्रदेशी हो सकता है इस कारण सर्वज्ञदेव उपचार से पुद्गल परमाणु को 'काय' कहते हैं ॥ २६ ॥

An atom (of Pudgala), though having one Pradesa, becomes of many pradesas, through being Pradesa in many skandhas.[1]. For this reason, from the ordinary point of view, the omniscient ones call (it to be) 'Kaya.'

*

1. Modifications of Pudgala achieved when many atoms combine together.

❀ प्रदेश का लक्षण

जावदियं आयासं अविभागीपुग्गलाणुउट्टद्धं ।
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ॥ २७ ॥

यावतिकं आकाशं अविभागिपुद्गलाण्वष्टब्धम् ।
तं खलु प्रदेशं जानीहि सर्वाणुस्थानदानार्हम् ॥ २७ ॥

जिसमें कोई भाग नहीं उस अविभागी पुद्गल-अणु से,
व्याप्त हुआ आकाश-भाग वह 'प्रदेश' माना है जिनसे ।
किन्तु एक आकाश-देश में सब अणु मिलकर रह सकते,
वस्तु तत्त्व में बुध-जन रमते जड़-जन संशय कर सकते ॥ २७ ॥

[जावदियं] જેટલું [आयासं] આકાશ [अविभागीपुग्गलाणुउट्टद्धं] એક અવિભાગી અર્થાત્ જેનો બીજો ભાગ ન થઈ શકે એવા પુદ્ગલ પરમાણુ દ્વારા વ્યાપ્ત છે [तं] તેને [खु] નિશ્ચયથી [सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं] સર્વ અણુઓને સ્થાન દેવા યોગ્ય [पदेसं] પ્રદેશ [जाणे] જાણવો.

जितना आकाश अविभागी पुद्गलाणु – से रोका जाता है उसको सब परमाणुओं को स्थान देने में समर्थ 'प्रदेश' जानो ॥ २७ ॥

Know that to be surely Pradesa, the space of which is occupied by one undivisible atom of Pudgala and which can give space to all particles.

*

सुमतिनाथ प्रभु सुमति दो, मम मति है अति मंद ।
बोध कली खुल-खिल उठे, महक उठे मकरन्द ॥

*

तुम जिन मेघ मयूर मैं, गरजो बरसो नाथ ।
चिर प्रतीक्षित हूँ खड़ा, ऊपर करके माथ ॥

❀ सात पदार्थों का नाम-निर्देश

आसव बंधण संवर णिज्जर मोक्खो सपुण्णपावा जे ।
जीवाजीवविसेसा तेवि समासेण पभणामो ॥ २८ ॥

आस्रवबंधनसंवरनिर्जरमोक्षाः सपुण्यपापाः ये ।
जीवाजीवविशेषाः तान् अपि समासेन प्रभणामः ॥ २८ ॥

आस्रव-बन्धन-संवर-निर्जर-मोक्ष-तत्त्व भी बतलाया,
सात-तत्त्व, नव पदार्थ होते पाप-पुण्य को मिलवाया ।
जीव-द्रव्य औ पुद्गल की ये विशेषतायें मानी हैं,
कुछ वर्णन अब इनका करती जिन-गुरु-जन की वाणी है ॥ २८ ॥

[जे] જે [आसववंधणसंवरणिज्जरमोक्खो] આશ્રવ, બંધ, સંવર, નિર્જરા, મોક્ષ [सपुण्णपावा] પુણ્ય અને પાપ સહિત સાત તત્ત્વ છે તે [जीवाजीवविसेसा] જીવ અને અજીવ દ્રવ્યનાં ભેદ છે [तेवि] તેઓને પણ [समासेण] સંક્ષેપથી [पभणामो] આગળ કહીએ છીએ.

अब जीव, अजीव के भेदरूप जो आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा, मोक्ष, पुण्य तथा पाप ऐसे सात पदार्थ हैं, इनको संक्षेप से कहते हैं ॥ २८ ॥

We shall describe briefly those varieties of Jiva and Ajiva which are (known as) Asrava, Bandha, Samvara, Nirjara and Moksha with Punya[1] and Papa.[2]

*

1. Auspicious Bhava. 2. Inauspicious Bhava.

शुभ्र-सरल तुम, बाल तव, कुटिल कृष्ण-तम नाग ।
तव चिति चित्रित ज्ञेय से, किन्तु न उसमें दाग ॥

❀ आस्रव का स्वरूप

आसवदि जेण कम्मं परिणामेणप्पणो स विण्णेओ ।
भावासवो जिणुत्तो कम्मासवणं परो होदि ॥ २९ ॥

आस्रवति येन कर्म परिणामेन आत्मनः सः विज्ञेयः ।
भावास्रवः जिनोक्तः कर्मास्रवणं परः भवति ॥ २९ ॥

द्रव्यास्रव औ भावास्रव यों माने जाते आस्रव दो,
आतम के जिन परिणामों से कर्म बने 'भावास्रव' सो ।
कर्म-वर्गणा जड़ हैं जिन का कर्म रूप में ढल जाना,
'द्रव्यास्रव' बस यही रहा है जिनवर का यह बतलाना ॥ २९ ॥

[अप्पणो] આત્માનાં [जेण] જે [परिणामेण] પરિણામથી [कम्मं] પુદ્ગલ કર્મ [आसवदि] આવે છે [स] તેને [जिणुत्तो] જિનેન્દ્ર ભગવાને કહેલો [भावासवो] ભાવાસ્રવ [विण्णेओ] જાણવો જોઈએ અને [कम्मासवणं] પુદ્ગલ કર્મનું આવવું તે [परो] દ્રવ્યાસ્રવ [होदि] છે.

आत्मा के जिस परिणाम से कर्म का आस्रव होता है उसे श्री जिनेन्द्र द्वारा कहा हुआ भावास्रव जानना चाहिए कर्मों का और जो ज्ञानावरणादिक रूप कर्मों का आस्रव है सो द्रव्यास्रव है ॥ २९ ॥

That modification of the soul by which Karma gets into it is to be known as Bhavasrava as told by the Jina and the influx of Karma is to be known as the other kind of Asrava, Dravyasrava.

*

विराग पद्मप्रभु आपके, दोनों पाद-सराग ।
रागी मम मन जा वहीं, पीता तभी पराग ॥

❀ भावास्रव के भेद

मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोधादओऽथ विण्णेया ।
पण पण पणदस तिय चदु कमसो भेदा दु पुव्वस्स ॥ ३० ॥

मिथ्यात्वाविरतिप्रमाद योगक्रोधादयः अथ विज्ञेयाः ।
पञ्च पञ्च पञ्चदश त्रयः चत्वारः क्रमशः भेदाः तु पूर्वस्य ॥ ३० ॥

मिथ्या-अविरति पाँच-पाँच हैं त्रिविध-योग का बाना है,
पन्द्रह-विध है प्रमाद होता कषाय-चउविध माना है ।
भावास्रव के भेद रहे ये रहे ध्यान में जिन-वचना,
ध्येय रहे आस्रव से बचना जिन-वचना में रच-पचना ॥ ३० ॥

[अथ] અને [पुव्वस्स] પૂર્વના અર્થાત્ ભાવાસ્રવનાં [मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोधादओ] મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, યોગ અને કષાય [भेदा] ભેદો છે [दु] અને [कमसो] તેનાં ક્રમે કરીને [पण पण पणदस तिय चदु] પાંચ, પાંચ, પંદર, ત્રણ અને ચાર ભેદો [विण्णेया] જાણવા જોઈએ.

पहले यानी भावास्रवके मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, योग और क्रोधादि कषाय ऐसे पाँच भेद जानने चाहिये । उनमें से मिथ्यात्व आदि के क्रमसे पाँच, पाँच, पन्द्रह, तीन और चार भेद हैं ॥ ३० ॥

Then it should be known that the subdivisions of the former (i.e. Bhavasrava) are Mithyatva[1], Avirti[2], Pramad[3], Yoga[4] and Kasaya[5] which are again of five, five, fifteen, three and four classes respectively.

*

1. delusion. 2. Lack of control. inability to take vow. 3. Inadvertance. 4. Activities. 5. Passion, anger...etc.

❀ द्रव्यास्रव का स्वरूप व्र भेद

णाणावरणादीणं जोग्गं जं पुग्गलं समासवदि ।
दव्वासवो स णेओ अणेयभेओ जिणक्खादो ॥ ३१ ॥

ज्ञानावरणादीनां योग्यं यत् पुद्गलं समास्रवति ।
द्रव्यास्रवः सः ज्ञेयः अनेकभेदः जिनाख्यातः ॥ ३१ ॥

ज्ञानावरणादिक कर्मों में ढलने के क्षमता वाले,
पुद्गल-आस्रव, 'द्रव्यास्रव' है जिन कहते समतावाले ।
रहा एक विध, द्विविध रहा वह चउविध, वसुविध, विविध रहा,
दुखद तथा है, जिसे काटता निश्चित ही मुनि-विबुध रहा ॥ ३१ ॥

[णाणावरणादीणं] જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મોરૂપ [जोग्गं] થવા યોગ્ય [जं] જે [पुग्गलं] પુદ્ગલ (કાર્મણવર્ગણા) [समासवदि] આવે છે [स] તે [जिणक्खादो] જિનેન્દ્રદેવે કહેલો [दव्वासवो] દ્રવ્યાસ્રવ [अणेयभेओ] અનેક ભેદવાળો (પ્રકારનો) જાણવો જોઈએ.

જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મોં કે યોગ્ય જો પુદ્ગલ આતા હૈ ઉસકો દ્રવ્યાસ્રવ જાનના ચાહિયે । વહ અનેક ભેદોંવાલા હૈ, ઐસા શ્રી જિનેન્દ્રદેવ ને કહા હૈ ॥ ३१ ॥

That influx of matter which is capable of causing Karmas, Jnanavarnia[1]..etc. is to be known as Dravyasrava as called by the Jina and possessing many varieties.

*

1. Hindering the true qualities of the soul.

अबंध भाते काट के, वसु विध विधिका बंध ।
सुपार्श्व प्रभु निज प्रभु-पना, पा पाये आनन्द ॥

❀ बन्धतत्व का स्वरूप

बज्झदि कम्मं जेण दु चेदणभावेण भावबंधो सो ।
कम्मादपदेसाणं अण्णोण्णपवेसणं इदरो ॥ ३२ ॥

बध्यते कर्म येन तु चेतनभावेन भावबन्धः सः ।
कर्मात्मप्रदेशानां अन्योन्यप्रवेशनं इतरः ॥ ३२ ॥

द्रव्य-भावमय 'बन्ध' तत्त्व भी द्विविध रहा है तुम जानो,
चेतन-भावों से विधि बँधता 'भाव-बन्ध' सो पहिचानो ।
आत्म-प्रदेशों कर्म-प्रदेशों का आपस में घुल-मिलना,
'द्रव्य-बन्ध' है बन्धन टूटे आपस में हम तुम मिलना ॥ ३२ ॥

[जेण] જે [चेदणभावेण] ચૈતન્યભાવથી (મિથ્યાત્વાદિ ૩૫ આત્મપરિણામ) [कम्मं] કર્મ [बज्झदि] બંધાય છે [सो] તે પરિણામ [भावबंधो] ભાવબંધ છે [दु] અને [कम्मापदेसाणं] કર્મ અને આત્મપ્રદેશોનો [अण्णोण्णपवेसणं] એકમેકમાં પ્રવેશ થવો તેને [इदरो] દ્રવ્યબંધ કહે છે.

जिस चेतनभाव से कर्म बँधता है, वह 'भावबन्ध' है, और कर्म तथा आत्मा के प्रदेशों का परस्पर प्रवेश अर्थात् कर्म और आत्मा के प्रदेशों का एकमेक होना 'द्रव्य-बन्ध' है ॥ ३२ ॥

That conscious state by which Karma is bound (with the soul) is called Bhava-bandha, while the interpenetration of the Pradesas of Karma and the soul is the other (i.e. Dravyabandha)

*

बांध-बांध विधि-बंध मैं, अन्ध बना मति-मन्द ।
ऐसा बल दो अंध को, बंधन तोडूँ द्वन्द ॥

❀ बन्ध के भेद व कारण

पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसभेदादु चदुविधो बंधो ।
जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागा कसायदो होंति ॥ ३३ ॥

प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशभेदात् तु चतुर्विधः बन्धः ।
योगात् प्रकृतिप्रदेशौ स्थित्यनुभागौ कषायतः भवतः ॥ ३३ ॥

प्रदेश-अनुभव तथा प्रकृति-थिति 'द्रव्य-बन्ध' भी चउविध है,
प्रशम-भाव के पूर जिनेश्वर-पद-पूजंक कहते बुध हैं !
प्रदेश का औ प्रकृति-बन्ध का 'योग' रहा वह कारण है,
अनुभव-थिति बन्धों का कारण 'कषाय' है वृष-मारग है ॥ ३३ ॥

[बंधो] બંધ [पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसभेदा] પ્રકૃતિ, સ્થિતિ, અનુભાગ અને પ્રદેશના ભેદથી [चदुविधो] ચાર પ્રકારનો છે. તેમાં [पयडिपदेसा] પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધ [जोगा] યોગથી અને [ठिदिअणुभागा] સ્થિતિ અને અનુભાગબંધ [कसायदो] કષાયથી [होंति] થાય છે.

प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश; इन भेदों से बन्ध चार प्रकार का है। योगो से प्रकृति तथा प्रदेशबन्ध होते है और कषायों से स्थिति तथा अनुभाग बन्ध होते है ।

Bandha is of four kinds, according to the (subdivisions, viz.) Prakriti,[1] Sthiti,[2] Anubhaga[3] and Pradesa.[4] Prakiti and Pradesa are (produced) from Yoga, but Sthiti and Anubhaga are from Kasaya.

*

1. Nature of the Karma. 2. The period for which the various kinds of Karma will stay in a soul. 3. The intensity of the results Karma may produce. 4. The mass of the Karma attached to the soul.

❀ संवर – तत्व का स्वरूप एवं भेद

चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेदू ।
सो भावसंवरो खलु दव्वासवरोहणे अण्णो ॥ ३४ ॥

चेतनपरिणामः यः कर्मणः आस्रवनिरोधने हेतुः ।
सः भावसंवरः खलु द्रव्यास्रवरोधने अन्यः ॥ ३४ ॥

चेतन गुण से मण्डित जो है आतम का परिणाम रहा,
कर्मास्रव के निरोध में है कारण, सो अभिराम रहा ।
यही 'भाव-संवर' है माना स्वाश्रित है सम्बल-धर है,
कर्मास्रव का रुक जाना ही रहा 'द्रव्य-संवर' जड़ है ॥ ३४ ॥

[जो] જે [चेदणपरिणामो] આત્માના પરિણામ [कम्मस्स] કર્મના [आसवणिरोहणे] આસ્રવને રોકવામાં [हेदू] કારણ છે [सो] તે [भावसंवरो] ભાવસંવર છે અને [दव्वासवरोहणे] કર્મ રૂપ પુદ્ ગલદ્રવ્યના આસ્ર વ રો કાવો તે નિશ્ચયથી [अण्णो] અન્ય અર્થાત્ દ્રવ્યસંવર છે.

आत्मा का जो परिणाम कर्मके आस्रव को रोकने में कारण है, उसको भावसंवर कहते हैं और जो द्रव्यास्रव को रोकने में कारण है सो द्रव्यसंवर है ॥ ३४ ॥

That Modification of Consciousness which is the cause of checking Asrava (influx) of Karma, is surely Bhavasamvara, and the other (known as Dravyasamvara is known from) checking Dravyasrava.

चंद्र कलंकित, किन्तु हो, चन्द्रप्रभु अकलंक ।
वह तो शंकित केतु से, शंकर तुम निःशंक ॥

❀ भाव – संवर के भेद

वदसमिदीगुत्तीओ धम्माणुपेहा परीसहजओ य ।
चारित्तं बहुभेया णायव्वा भावसंवरविसेसा ॥ ३५ ॥

व्रतसमितिगुप्तयः धर्मानुप्रेक्षाः परीषहजयः च ।
चारित्रं बहुभेदाः ज्ञातव्याः भावसंवरविशेषाः ॥ ३५ ॥

पञ्च-समितियाँ, तीन-गुप्तियाँ पञ्च-व्रतों का पालन हो,
बार-बार बारह भावन भी दश-धर्मों का धारण हो ।
तथा विजय हो परीषहों पर बहुविध-चारित में रमना,
भेद, 'भाव-संवर' के ये सब रमते इनमें वे श्रमणा ॥ ३५ ॥

[वदसमिदीगुत्तीओ] વ્રત, સમિતિ અને ગુપ્તિ [धम्माणुपेहा] ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા [परीसहजओ] પરીષહજય [य] અને [चारित्तं] ચારિત્ર [बहुभेया] એ અનેક પ્રકારનાં [भावसंवर – विसेसा] ભાવસંવરના ભેદો [णायव्वा] જાણવા.

पांच व्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति, दश धर्म, बारह अनुप्रेक्षा, बाईस परीषह-जय तथा अनेक प्रकार का चारित्र इस तरह ये सब भावसंवर के भेद जानने चाहिये ॥ ३५ ॥

The Vratas (vows), Samitis (attitudes of carefulness), Guptis (Restraints), Dharmas (observances), Anupreksas (meditations), Parisaha-jayas (the victories over troubles) and various kinds of charitra (conduct) are to be known as varieties of Bhavasamvara.

रंक बना हूँ मम अत, मेटो मन का पंक ।
जाप जपूँ जिन-नाम का, बैठ सदा पर्यंक ॥

❀ निर्जरा-तत्व का स्वरूप

जह कालेण तवेण य भुत्तरसं कम्मपुग्गलं जेण ।
भावेण सडदि णेया तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा ॥ ३६ ॥

यथा कालेन तपसा च भुक्तरसं कर्मपुद्गलं येन ।
भावेन सडति ज्ञेया तस्सडनं चेति निर्जरा द्विविधा ॥ ३६ ॥

अपने सुख-दुख फल को देकर जिन भावों से विधि झड़ना,
यथा-काल या तप-गरमी से 'भाव-निर्जरा' उर धरना ।
पुद्गल कर्मों का वह झड़ना 'द्रव्य-निर्जरा' यहाँ कही,
भाव-निर्जरा द्रव्य-निर्जरा सुनो ! निर्जरा द्विधा रही ॥ ३६ ॥

[जह कालेण] સમય આવ્યેથી (અવધિ પૂરી થવાથી) [य] અને [तवेण] તપથી [भुत्तरसं] જેનું ફળ ભોગવાઈ ગયું છે એવા [कम्मपुग्गलं] કર્મ પુદ્ગલ [जेण भावेण] જે ભાવથી [सडदि] ખરી જાય છે તેને ભાવનિર્જરા [णेया] જાણવી [य] અને [तस्सडणं] કર્મોનું ખરી જવું તે દ્રવ્યનિર્જરા છે. [इदि] આ પ્રમાણે [णिज्जरा] નિર્જરા [दुविहा] બે પ્રકારે [णेया] જાણવી.

यथा समय (उदयकाल में) फल देकर अथवा तप द्वारा (बिना फल दिये) आत्मा के जिस भाव से कर्म नष्ट होता है, वह भाव निर्जरा है और कर्म पुद्गलों का आत्मा से नष्ट होना द्रव्य निर्जरा है । निर्जरा के सविपाक (फल देकर कर्मों का झड़ना) और अविपाक (तप द्वारा बिना फल दिये ही कर्मों का झड़ना) दो भेद हैं ॥ ३६ ॥

That Bhava (modification of the soul) by which the matter of Karma disappears in proper time after the fruits (of such Karma) are enjoyed (is called Bhava-Nirjara), also (the destruction of Karmic matter) through penances (is known as Bhava-Nirjara). And that destruction (itself) (is known as Dravya-Nirjara) Thus Nirjara should be known of two kinds. ⁂

❀ मोक्ष-तत्व का स्वरूप

सव्वस्स कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो हु परिणामो ।
णेयो स भावमुक्खो दव्वविमुक्खो य कम्मपुहभावो ॥ ३७ ॥

सर्वस्य कर्मणः यः क्षयहेतुः आत्मनः हि परिणामः ।
ज्ञेयः सः भावमोक्षः द्रव्यविमोक्षः च कर्मपृथग्भावः ॥ ३७ ॥

सब कर्मों के क्षय में कारण आतम का परिणाम रहा,
'भाव-मोक्ष' वह यही बताता जिनवर-मत अभिराम रहा ।
आत्म-प्रदेशों से अति न्यारा तन का, विधि का हो जाना,
'द्रव्य-मोक्ष' है, मोक्ष-तत्त्व भी द्रव्य-भावमय, सो पाना ॥ ३७ ॥

[अप्पणो] આત્માનાં [जो] જે [परिणामो] પરિણામ [सव्वस्स] સમસ્ત [कम्मणो] કર્મોનો [खयहेदू] ક્ષય થવામાં કારણ છે [स] તે [हु] નિશ્ચયથી [भावमुक्खो] ભાવમોક્ષ છે [य] અને [कम्मपुहभावो] આત્માથી દ્રવ્યકર્મોનું જુદા થવું તે [दव्वमुक्खो] દ્રવ્યમોક્ષ [णेयो] જાણવો.

सब कर्मों के नाश का कारण आत्माका जो परिणाम है, उसको 'भाव-मोक्ष' जानना चाहिये और कर्मों का जो आत्मा से सर्वथा भिन्न होना है, वह 'द्रव्य-मोक्ष' है ॥ ३७ ॥

That modification of the soul which is the cause of the destruction of all Karma, is surely to be known as Bhava moksha and (actual) separation of the Karmas is Dravya-moksha.

⁂

सुविध ! सुविधि के पूर हो, विधि से हो अति दूर ।
मम मन से मत दूर हो, विनती हो मंजूर ॥

❀ पुण्य और पाप का निरूपण

सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा ।
सादं सुहाउ णामं गोदं पुण्णं पराणि पावं च ॥ ३८ ॥

शुभाशुभभावयुक्ताः पुण्यं पापं भवन्ति खलु जीवाः ।
सातं शुभायुः नाम गोत्रं पुण्यं पराणि पापं च ॥ ३८ ॥

शुभ-भावों से सहित हुआ सो जीव "पुण्य" हो आप रहा,
अशुभ-भाव से घिरा हुआ ही जीव आप हो "पाप" रहा ।
सुर-नर-पशु की आयु-तीन ये उच्चगोत्र औ सुखसाता,
नाम-कर्म सैंतीस पुण्य हैं शेष पाप हैं दुख-दाता ॥ ३८ ॥

[सुहअसुहभावजुत्ता] શુભ અને અશુભ ભાવથી યુક્ત [जीवा] જીવ [खलु] નિશ્ચયથી [पुण्णं पावं] પુણ્યરૂપ અને પાપરૂપ [हवंति] થાય છે. [सादं] શાતાવેદનીય, [सुहाउ] શુભ આયુ, [णामं] શુભ નામ, [गोदं] ઉચ્ચ ગોત્ર એ સર્વે [पुण्णं] પુણ્યપ્રકૃતિ છે [च] અને [पराणि] અશાતાવેદનીય, અશુભ આયુ, અશુભનામ અને નીચ ગોત્ર તથા ચાર ઘાતિ કર્મો [पावं] પાપપ્રકૃતિ છે.

शुभ तथा अशुभ परिणामों से युक्त जीव पुण्य पाप रूप होते हैं। साता वेदनीय, शुभ आयु – शुभ नाम – शुभ गोत्र – ये पुण्य प्रकृतियाँ हैं और शेष सब पाप प्रकृतियाँ हैं ॥ ३८ ॥

The Jivas consist of Punya and Papa surely having auspicious and inauspicious Bhavas (respectively). Punya is Satavedaniya,[1] auspicious life, name and class, while Papa is (exactly) the opposite (of these).

*

1. Karma which produces pleasure and procures objects causing pleasure.

❀ मोक्ष का कारण

सम्मद्दंसणणाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे ।
ववहारा णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा ॥ ३९ ॥

सम्यग्दर्शनं ज्ञानं चरणं मोक्षस्य कारणं जानीहि ।
व्यवहारात् निश्चयतः तत्त्रिकमयः निजः आत्मा ॥ ३९ ॥

सच्चा दर्शन, तत्त्व ज्ञान भी सच्चा, सच्चा चरण तथा,
'मोक्षमार्ग-व्यवहार' यही है प्रथम यही है शरण-कथा ।
परन्तु 'निश्चय-मोक्षमार्ग' तो निज-आतम ही कहलाता,
क्योंकि आतमा इन तीनों से तन्मय होकर वह भाता ॥ ३९ ॥

[ववहारा] વ્યવહારનયથી [सम्मद्दंसणणाणं चरणं] સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રને [मोक्खस्स] મોક્ષનું [कारणं जाणे] કારણ જાણો. [णिच्छयदो] નિશ્ચયનયથી [तत्तियमइओ] સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્ર (અભેદરૂપ) સહિત [णिओ] પોતાનો [अप्पा] આત્મા મોક્ષનું કારણ છે.

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनों के समुदाय को व्यवहार नय से मोक्ष का कारण जानो । निश्चय नय से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान तथा सम्यक् चारित्रस्वरूप निज आत्मा को मोक्ष का कारण जानो ॥ ३९ ॥

Know that from the ordinary point of view, right faith, right knowledge and right conduct are the cause of liberation. According to Nischaya Naya one's own soul consisting of these three is the cause of liberation.

*

बाल मात्र भी ज्ञान ना मुझमें मैं मुनि-बाल ।
बबाल भव का मम मिटे, प्रभु-पद में मम भाल ॥

❀ रत्नत्रययुक्त आत्मा ही मोक्ष का कारण क्यों ?

रयणत्तयं ण वट्टइ अप्पाणं मुइत्तु अण्णदवियह्मि ।
तह्मा तत्तियमइउ होदि हु मुक्खस्स कारणं आदा ॥ ४० ॥

रत्नत्रयं न वर्तते आत्मानं मुक्त्वा अन्यद्रव्ये ।
तस्मात् तत्त्रिकमयः भवति खलु मोक्षस्य कारगं आत्मा ॥ ४० ॥

ज्ञानादिक ये तीन रतन तो आतम में ही झिल-मिलते,
शेष सभी द्रव्यों में झाँको कभी किसी को ना मिलते ।
इसीलिए इन रत्नों में नित तन्मय हो प्रतिभासित है,
माना निश्चय मोक्ष-सौख्य का कारण आतम-भावित है ॥ ४० ॥

[रयणत्तयं] રત્નત્રય (સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્ર) [अप्पाणं] આત્માને [मुइत्तु] છોડીને [अण्णदवियह्मि] બીજા દ્રવ્યમાં [ण वट्टइ] રહેતું નથી [तह्मा] તે કારણથી [तत्तियमइउ] રત્નત્રય સહિત (એકતારૂપ) [आदा] આત્મા [हु] નિશ્ચયથી [मोक्खस्स] મોક્ષનું [कारण होदि] કારણ છે.

आत्मा को छोड़ कर अन्य द्रव्य में रत्नत्रय – नहीं रहता, इस कारण उस रत्नत्रयमय आत्मा ही निश्चय से मोक्ष का कारण है ॥ ४० ॥

The three jewels (i.e. right faith, right knowledge and right conduct) do not exist in any other substance except the soul. Therefore, the soul (with right faith, right knowledge and right conduct together) surely is the cause of liberation.

*

शीतल चन्दन है नहीं, शीतल हिम ना नीर ।
शीतल जिन ! तव मत रहा शीतल, हरता पीर ॥

❀ सम्यक्दर्शन किसे कहते हैं

जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो तं तु ।
दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं सम्मं खु होदि सदि जह्मि ॥ ४१ ॥

जीवादिश्रद्धानं सम्यक्त्वं रूपं आत्मनः तत् तु ।
दुरभिनिवेशविमुक्तं ज्ञानं सम्यक् खलु भवति सति यस्मिन् ॥ ४१ ॥

जीवा-जीवादिक तत्त्वों पर करना जो श्रद्धान सही,
'सम-दर्शन' है वह आतम का स्वरूप माना, जान सही ।
जिसके होने पर क्या कहना संशय-विभ्रम भगते हैं,
समीचीन तो ज्ञान बने वह प्राण-प्राण झट जगते हैं ॥ ४१ ॥

[जीवादीसद्दहणं] જીવ આદિ સાત તત્ત્વોનું શ્રદ્ધાન કરવું [सम्मत्तं] સમ્યગ્દર્શન છે [तं] તે [अप्पणो] આત્માનું [रूवं] સ્વરૂપ છે [तु] અને [जह्मि] જે સમ્યગ્દર્શન થતાં [दुरभिणिवेसविमुक्कं] વિપરીત અભિનિવેશથી (સંશય, વિભ્રમ અને અનધ્યવસાય) રહિત [णाणं] જ્ઞાન [खु] નિશ્ચયથી [सम्मं होदि] સમ્યક્ હોય છે.

जीव आदि पदार्थों का जो श्रद्धान करना है वह तो सम्यक्त्व है और वह सम्यक्त्व आत्मा का स्वरूप है । तथा इस सम्यक्त्व के होने पर संशय, विपर्यय एवं अनध्यवसाय इन तीनों दुरभिनिवेशों से रहित सम्यग्ज्ञान होता है ॥ ४१ ॥

Samyak Darshana is the right faith in Jiva...etc. seven Tatvas (essential elements). That is a quality of soul, and when right faith is acquired, Jnana (knowledge), being free from errors, surely becomes right.

*

सुचिर काल से मैं रहा, मोह-नींदसे सुप्त ।
मुझे जगा कर, कर कृपाए प्रभो करो परितृप्त ॥

❀ सम्यग्ज्ञान का स्वरूप

संसयविमोहविब्भमविवज्जियं अप्पपरसरूवस्स ।
गहणं सम्मण्णाणं सायारमणेयभेयं तु ॥ ४२ ॥

संशयविमोहविभ्रमविवर्जितं आत्मपरस्वरूपस्य ।
ग्रहणं सम्यक् ज्ञानं साकारं अनेकभेदं च ॥ ४२ ॥

विमोह-विभ्रम जहाँ नहीं हैं संशय से जो दूर रहा,
निज को निज ही, पर को पर ही जान रहा, ना भूल रहा ।
समीचीन बस 'ज्ञान' वही है बहुविध हो साकार रहा,
मन-वच-तन से गुणी-जनों का जिसके प्रति सत्कार रहा ॥ ४२ ॥

[संसयविमोहविब्भमविवज्जियं] સંશય, વિમોહ અને વિભ્રમથી રહિત [सायारं] આકાર સહિત [अप्पपरसरूवस्स] આત્મા અને પરના સ્વરૂપનું [गहणं] ગ્રહણ કરવું તે [सम्मण्णाणं] સમ્યગ્જ્ઞાન છે [तु] અને તે [अणेय भेयं] અનેક પ્રકારે છે.

आत्मस्वरूप और अन्य पदार्थ के स्वरूप का जो संशय, विमोह (अनध्यवसाय) और विभ्रम (विपर्यय) रूप कुज्ञान से रहित जानना है वह सम्यग्ज्ञान है । यह आकार (विकल्प) सहित है और अनेक भेदोंवाला है ॥ ४२ ॥

Samyak Jnana (right knowledge) is the detailed cognition of the soul (self) and other elements, is free from samsay,[1] vimoha[2] and vibhrama,[3] and is of many varieties.

*

1. Doubt. 2. Perversity. 3. Indefiniteness.

अनेकान्त की कान्ति से, हटा तिमिर एकान्त ।
नितान्त हर्षित कर दिया, क्लान्त विश्व को शान्त ॥

❀ दर्शन का स्वरूप

जं सामण्णं गहणं भावाणं णेव कट्टुमायारं ।
अवसेसिदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णए समए ॥ ४३ ॥

यत् सामान्यं ग्रहणं भावानां नैव कृत्वा आकारम् ।
अविशेषयित्वा अर्थान् दर्शनं इति भण्यते समये ॥ ४३ ॥

दृश्य रही कुछ, अदृश्य भी हैं लघु-कुछ, गुरु-कुछ 'वस्तु' रही,
इसी तरह बस तरह-तरह की स्वभाववाली अस्तु सही ।
'दर्शन' तो सामान्य-मात्र को विषय बनाता अपना है,
विषय-भेद तो 'ज्ञान' कराता जिन-मत का यह जपना है ॥ ४३ ॥

[अट्ठे] પદાર્થોના [अवसेसिदूण] વિશેષ અંશને ગ્રહણ કર્યા વિના [आयारं] આકારને [णेव] નહીં [कट्टु] (ગ્રહણ) કરતાં [जं] જે [भावाणं] પદાર્થોનું [सामाण्णं] સામાન્ય [गहणं] ગ્રહણ કરવું તે [दंसणं] 'દર્શન' છે [इदि] એમ [समए] શાસ્ત્રમાં [भण्णए] કહેલું છે.

यह सफेद है, यह काला है इत्यादि रूप से पदार्थों की विशेषता न करके और विकल्प को न करके पदार्थों का सामान्य से जो सत्तावलोकनरूप ग्रहण करना है उसको परमागम में 'दर्शन' कहा गया है ॥ ४३ ॥

That perception of generalities of things (i.e. existence only of things) in which there is no grasping of details, is called Darsana in (Jain) scriptures.

*

निश्रेयस सुख-धाम हो, हे जिनवर श्रेयांस ।
तव थुति अविरल मैं करूँ, जब लौं घट में श्वास

❀ दर्शन और ज्ञान की उत्पत्ति का नियम

दंसणपुव्वं णाणं छदमत्थाणं ण दोण्णि उवउग्गा ।
जुगवं जह्मा केवलिणाहे जुगवं तु ते दो वि ॥ ४४ ॥

दर्शनपूर्वं ज्ञानं छद्मस्थानां न दौ उपयोगौ ।
युगपत् यस्मात् केवलिनाथे युगपत् तु तौ द्वौ अपि ॥ ४४ ॥

पूर्ण-ज्ञान वह जिन्हें प्राप्त ना उन्हें प्रथम तो दर्शन हो,
बाद ज्ञान उपयोग, नहीं दो एक-साथ, कब दर्शन हो ?
पूर्ण-ज्ञान से पूर्ण-सुशोभित केवल-ज्ञानी बने हुये,
एक साथ उपयोग धरे दो अन्तर्यामी बने हुये ॥ ४४ ॥

[छदमत्थाणं] અલ્પજ્ઞાનીઓને [दंसणपुव्वं] દર્શનપૂર્વક [णाणं] જ્ઞાન હોય છે [जह्मा] કેમકે [दोण्णि उवउग्गा] બે ઉપયોગ [जुगवं ण] એકસાથે હોતા નથી [तु] પરંતુ [केवलिणाहे] કેવળી ભગવાનને [ते दो वि] તે બને ઉપયોગ [जुगवं] એકસાથે હોય છે.

छद्मस्थ जीवों के दर्शनपूर्वक ज्ञान होता है । क्योंकि, छद्मस्थों के ज्ञान और दर्शन ये दोनों उपयोग एक साथ नहीं होते । तथा केवली भगवान् के ज्ञान तथा दर्शन ये दोनों ही उपयोग एक साथ होते हैं ॥ ४४ ॥

In Chhadmastha,[1] Jnana is preceded by Darshana. For this reason the two Upayogas (viz. Jnana and Darshana) do not arise simultaneously (in them). But in Kevalis,[2] both of these Upayogas arise simultaneously.

*

1. Samsari Jivas with incomplete knowledge. 2. The Omniscients.

❀ व्यवहार – चारित्र का स्वरूप

असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं ।
वदसमिदिगुत्तिरूवं ववहारणया दु जिणभणियं ॥ ४५ ॥

अशुभात् विनिवृत्तिः शुभे प्रवृत्तिः च जानीहि चारित्रम् ।
व्रतसमितिगुप्तिरूपं व्यवहारनयात् तु जिनभणितम् ॥ ४५ ॥

अशुभ-भावमय पाप-वृत्ति को मन-वच-तन से जो तजना,
शुभ में प्रवृत्ति करना समुचित 'चारित' है मन रे भज ना !
यह 'चारित-व्यवहार' कहाता समिति-गुप्ति-व्रतवाला है,
इसविध जिन-शासंन है गाता सुधा-सुपूरित प्याला है ॥ ४५ ॥

[ववहारणया] વ્યવહારનયથી [असुहादो] અશુભ કાર્યથી [विणिवित्ती] નિવૃત્ત થવું [य] અને [सुहे] શુભ કાર્યમાં [पवित्ती] પ્રવૃત્તિ કરવી તેને [जिणभणियं] જિનેન્દ્ર ભગવાને કહેલું [चारित्तं] ચારિત્ર [जाण] જાણો [दु] અને તે ચારિત્ર [वदसमिदिगुत्तिरूवं] વ્રત, સમિતિ, ગુપ્તિ રૂપ છે.

जो अशुभ कार्य से निवृत्त (दूर) होना और शुभ कार्य में प्रवृत्त होना (लगना) है उसको चारित्र जानना चाहिये । श्री जिनेन्द्रदेवने व्यवहारनय से उस चारित्र को ५ व्रत, ५ समिति और ३ गुप्तिस्वरूप कहा है ॥ ४५ ॥

According to Vyavahara Naya know charitra (conduct) to be 'Refraining from what is harmful and engagement in what is beneficial,' as told by the Jina. And that conduct consists of Vratas,[1] Samities[2] and Guptis.[3]

*

1. Vows. 2. Attitudes of carefulness. 3. Restraints.

❀ निश्चय – चारित्र का स्वरूप

बहिरब्भंतरकिरियारोहो भवकारणप्पणासट्ठं ।
णाणिस्स जं जिणुत्तं तं परमं सम्मचारित्तं ॥ ४६ ॥

बहिरभ्यन्तरक्रियारोधः भवकारणप्रणाशार्थम् ।
ज्ञानिनः यत् जिनोक्तं तत् परमं सम्यक्चारित्रम् ॥ ४६ ॥

बाहर की भी, भीतर की भी क्रिया-मात्र को बन्द किया,
भव के कारण पूर्ण-मिटाना यही मात्र सौगन्द लिया ।
उस ज्ञानी का जीवन ही वह रहा परम 'शुचि-चारित' है,
जिन-वाणी का यही बताना मुनीश्वरों से धारित है ॥ ४६ ॥

[भवकारणप्पणासट्ठं] ભવનાં કારણનો નાશ કરવા માટે [णाणिस्स] જ્ઞાનીઓનું [जं बहिरब्भंतरकिरियारोहो] જે બાહ્ય અને અભ્યંતર ક્રિયાઓનું રોકવું છે [तं] તે [जिणुत्तं] જિનેન્દ્રદેવે કહેલું [परमं] ઉત્કૃષ્ટ (નિશ્ચય) [सम्मचारित्तं] સમ્યગ્ચારિત્ર છે.

ज्ञानी जीव के जो संसार के कारणों को नष्ट करने के लिये बाह्य और अन्तरङ्ग क्रियाओं का निरोध है; वह श्री जिनेन्द्र का कहा हुआ उत्कृष्ट सम्यक्चारित्र है ॥ ४६ ॥

That (preventing) checking of external and internal actions by Jnani (one who has knowledge), in order to destroy the causes of samsar (misery), is the excellent Samyak Charitra (right conduct) mentioned by the Jina.

*

कराल काला व्याल सम, कुटिल चाल का काल ।
मार दिया तुमने उसे, फाड़ा उसका गाल ॥

❀ ध्यान की उपयोगिता

दुविहं पि मुक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा ।
तह्मा पयत्तचित्ता जूयं झाणं समब्भसह ॥ ४७ ॥

द्विविधं अपि मोक्षहेतुं ध्यानेन प्राप्नोति यत् मुनिः नियमात् ।
तस्मात् प्रयत्नचित्ताः यूयं ध्यानं समभ्यस्त ॥ ४७ ॥

निश्चय औ व्यवहार भेद से द्विविध यहाँ शिव-पन्थ रहा,
ध्यान-काल में निश्चित उसको पाता है मुनि-सन्त अहा !!
इसीलिए तुम दत्त-चित्त हो एक-मना हो विजित-मना,
सतत करो अभ्यास – ध्यान का शीघ्र बनो फिर विगत-मना ॥ ४७ ॥

[जं] કારણ કે [मुणी] મુનિ [दुविहं पि] બન્ને પ્રકારના પણ [मुक्खहेउं] મોક્ષના કારણોને [णियमा] નિયમથી [झाणे] ધ્યાનથી [पाउणदि] પ્રાપ્ત કરે છે. [तह्मा] તેથી [जूयं] તમે [पयत्तचित्ता] (સાવધાન થઈ) તેમાં પ્રયત્નશીલ થઈને [झाणं] ધ્યાનનો [समब्भसह] સારી રીતે અભ્યાસ કરો.

मुनि ध्यान के करने से जो नियम से निश्चय और व्यवहाररूप मोक्षमार्ग को पाता है । इस कारण तुम चित्त को एकाग्र करके उस ध्यान का अभ्यास करो ॥ ४७ ॥

Because surely (by the rule) a sage gets both the (Vyavahara and Nischaya) causes of liberation by meditation, therefore (all of) you practise meditation with careful mind.

*

मोह-अमल वश समल बन, निर्बल मैं भगवान ।
विमलनाथ ! तुम अमलं हो, संबल दो भगवान ॥

❀ ध्यान करने का उपाय

मा मुज्झह मा रज्जह मा दूसह इट्ठणिट्ठअट्ठेसु ।
थिरमिच्छहि जइ चित्तं विचित्तझाणप्पसिद्धीए ॥ ४८ ॥

मा मुह्यत मा रज्यत मा द्विष्यत इष्टानिष्टार्थेषु ।
स्थिरं इच्छत यदि चित्तं विचित्रध्यानप्रसिद्ध्यै ॥ ४८ ॥

शुद्धातम के सहज ध्यान में होना जब है तल्लीना,
चञ्चल मन को अविचल करना चाहो यदि निज-आधीना ।
मोह करो मत, राग करो मत, द्वेष करो मत, तुम तन में,
इष्ट रहे कुछ, अनिष्ट भी हैं पदार्थ मिलते त्रिभुवन में ॥ ४८ ॥

[विचित्तझाणप्पसिद्धीए] વિચિત્ર અર્થાત્ અનેક પ્રકારનાં ધ્યાનની સિદ્ધિ માટે [जइ] જો [चित्तं] ચિત્તને [थिरं] સ્થિર કરવા [इच्छहि] ઇચ્છતા હો તો [इट्ठणिट्ठअट्ठेसु] ઈષ્ટ અને અનિષ્ટ પદાર્થોમાં [मा मुज्झह] મોહ ન કરો, [मा रज्जह] રાગ ન કરો, [मा दूसह] દ્વેષ ન કરો.

यदि तुम नाना प्रकार के ध्यान की सिद्धि के लिए चित्त को स्थिर करना चाहते हो तो इष्ट तथा अनिष्ट इन्द्रियों के विषयों में राग द्वेष और मोह मत करो ॥ ४८ ॥

If you wish to have your mind fixed (focussed) in order to succeed in various kinds of meditation, do not be deluded by or attached to beneficial objects and do not be averse to harmful objects.

*

अनन्त गुण पा कर दिया, अनन्त भव का अन्त ।
अनन्त सार्थक नाम तव, अनन्त-जिन जयवन्त

❀ ध्यान करने योग्य मन्त्र

पणतीससोलछप्पणचउदुगमेगं च जवह ज्झाएह ।
परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेण ॥ ४९ ॥

पञ्चत्रिंशत् षोडश षट् पञ्च चत्वारि द्विकं एकं च जपत ध्यायत ।
परमेष्ठिवाचकानां अन्यत् च गुरूपदेशेन ॥ ४९ ॥

णमोकार "पैंतीस-वर्ण" का मन्त्र रहा "सोलह"-"छह" का,
"पाँच" "चार" "दो" "इक" वर्णों का द्वार-ध्यान का, निज-गृह का ।
यों परमेष्ठी-वाचक वर्णों का नियमित जप-ध्यान करों,
या गुरु-संकेतों पर मन को कीलित कर अवधान करो ॥ ४९ ॥

[परमेट्ठिवाचयाणं] પરમેષ્ઠીવાચક [पणतीससोलछप्पणचउदुगं] પાંત્રીસ, સોળ, છ, પાંચ, ચાર, બે [च एगं] અને એક અક્ષરના મંત્રનો [जवह] જાપ કરો [ज्झाएंह] ધ્યાન કરો [च] અને [अण्णं] અન્ય મંત્રોનો [गुरूवएसेण] ગુરુના ઉપદેશ પ્રમાણે જપ અને ધ્યાન કરો.

पञ्च परमेष्ठियों को कहने वाले जो पैंतीस, सोलह, छः, पाँच, चार, दो और एक अक्षररूप मन्त्रपद हैं, उनका जाप करो और ध्यान करो । इनके सिवाय अन्य जो – मन्त्रपद हैं उनको भी गुरु के उपदेशानुसार जपो और ध्यावो ॥ ४९ ॥

Repeat (Japa) and meditate on the Mantras,[1] signifying the Panch Parameshthis[2] and consisting of thirty-five, sixteen, six, five, four, two and one letter. And other Mantras taught and given by the Guru.[3]

*

1. Blessed, proven energetic letter/s, word/s. 2. The five supreme beings. 3. Preceptor, spiritual teacher.

❀ अरहंत परमेष्ठी का स्वरूप

णट्ठचदुघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमईओ ।
सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो ॥ ५० ॥

नष्टचतुर्घातिकर्मा दर्शनसुखज्ञानवीर्यमयः ।
शुभदेहस्थः आत्मा शुद्धः अर्हन् विचिन्तनीयः ॥ ५० ॥

घाति-कर्म चउ समाप्त करके शुद्ध हुये जो, आप्त हुये,
अनन्त-दर्शन, अनन्त-सुख-बल पूर्ण ज्ञान को प्राप्त हुये ।
परमौदारिक तन-धारक हो परम-पूज्य "अरहन्त" हुये,
इन्हें बनाओ "ध्येय"-ध्यान में जय ! जय ! जय ! जयवन्त हुये ॥ ५० ॥

[णट्ठचदुघाइकम्मो] જેણે ચાર પ્રકારનાં ઘાતી કર્મોનો નાશ કર્યો છે, [दंसणसुहणाणवीरियमईओ] જે (અનંત) દર્શન, સુખ, જ્ઞાન અને વીર્ય સહિત છે, [सुहदेहत्थो] શુભ દેહ (સાત ધાતુ રહિત પરમૌદારિક શરીર)માં રહેલા છે [सुद्धो] તે શુદ્ધ (૧૮ દોષ રહિત) [अप्पा] આત્મા [अरिहो] અરિહંત છે અને તે [विचिंतिज्जो] ધ્યાન કરવા યોગ્ય છે.

चार घातिया कर्मों को नष्ट करनेवाला, अनन्त दर्शन, सुख, ज्ञान और वीर्य का धारक, उत्तम देह में विराजमान और शुद्ध-आत्मा 'अरिहंत' है, उसका ध्यान करना चाहिये ॥ ५० ॥

That pure soul existing in an auspicious body, possessed of (infinite) faith, happiness, knowledge and power, which has destroyed the four Ghatiya karmas[1] is to be meditated on as an Arhat.[2]

*

1. Karmas like Jnanavarniya...etc. which directly obstructs the menifestations of the quality of the soul like perfect Jnana...etc. 2. Arihant.

❀ सिद्ध परमेष्ठी का स्वरूप

णट्ठट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा ।
पुरिसायारो अप्पा सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो ॥ ५१ ॥

नष्टाष्टकर्मदेहः लोकालोकस्य ज्ञायकः द्रष्टा ।
पुरुषाकारः आत्मा सिद्धः ध्यायेत लोकशिखरस्थः ॥ ५१ ॥

लोक-शिखर पर निवास करते तीन-लोक के नायक हैं,
लोकालोकाकाश तत्त्व के केवल दर्शक-ज्ञायक हैं ।
पुरुषरूप आकार लिए हैं "सिद्धातम" हैं कहलाते,
स्व-तन-कर्म को नष्ट किये हैं ध्यावें उनको हम तातैं ॥ ५१ ॥

[णट्ठट्ठकम्मदेहो] જેણે (જ્ઞાનાવરણાદિ) આઠ કર્મો અને (ઔદારિકાદિ) પાંચ શરીરનો નાશ કર્યો છે, [लोयालोयस्स] લોક-અલોકનાં [जाणओ दट्ठा] જાણવા અને દેખવાવાળા છે, [पुरिसायारो] પુરુષના આકારે [लोयसिहरत्थो] લોકનાં શિખર પર સ્થિત [अप्पा] આત્મા [सिद्धो] સિદ્ધ પરમાત્મા છે, તેનું [झाएह] ધ્યાન કરવું જોઈએ.

नष्ट हो गया है अष्टकर्मरूप देह जिसके, लोकाकाश तथा अलोकाकाश को जानने देखनेवाला, पुरुष के आकारवाला – और लोक के शिखर पर विराजमान; ऐसा आत्मा सिद्ध परमेष्ठी है, इस कारण तुम सब उस 'सिद्ध' का ध्यान करो ॥ ५१ ॥

Meditate on the Siddha-the soul which is bereft of the bodies produced by eight kinds of Karmas, which is the seer and knower of Loka and Aloka, which has a shape like a human being and which stays at the summit of the Loka.

*

❀ आचार्य-परमेष्ठी का स्वरूप

दंसणणाणपहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे ।
अप्पं परं च जुंजइ सो आयरिओ मुणी झेओ ॥ ५२ ॥

दर्शनज्ञानप्रधाने वीर्यचारित्रवरतप आचारे ।
आत्मानं परं च युनक्ति सः आचार्यः मुनिः ध्येयः ॥ ५२॥

दर्शन-ज्ञानाचार प्रमुख कर चरित-वीर्य-तप खुद पालें,
पालन करवाते औरों से शिव-पथ पर चलने वाले ।
ये हैं मुनि-"आचार्य" हमारे पूज्य-पाद पालक प्यारे,
ध्यान इन्हीं का करें रात-दिन विनीत हम बालक सारे ॥ ५२ ॥

[जो] જે [मुणी] મુનિ [दंसणणाणपहाणे] દર્શન અને જ્ઞાનની પ્રધાનતા સહિત [वीरियचारित्तवरतवायारे] વીર્ય, ચારિત્ર તથા શ્રેષ્ઠ તપાચારમાં [अप्पं] પોતાને [च परं] તેમ જ બીજાને [जुंजइ] જોડે છે [सो आयरिओ] તે આચાર્ય (પરમેષ્ઠી) [झेओ] ધ્યાન કરવા યોગ્ય છે.

दर्शनाचार, ज्ञानाचार, वीर्याचार, चारित्राचार और तपाचार, इन पांचों आचारों में जो आप भी तत्पर होते हैं और अन्य शिष्यों को भी लगाते हैं ऐसे 'आचार्य-मुनि' ध्यान करने योग्य हैं ॥ ५२ ॥

That sage who attaches himself and others to the practice of Virya (power), Charitra (conduct) and Tapa (penance) in which faith and knowledge are eminent is to be meditated as Acharya.[1]

*

1. One who practises the five kinds of Acharas i.e. kinds of condut and makes his disciples to perform the same.

❀ उपाध्याय – परमेष्ठी का स्वरूप

जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवदेसणे णिरदो ।
सो उवज्झाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स ॥ ५३ ॥

यः रत्नत्रययुक्तः नित्यं धर्मोपदेशने निरतः ।
सः उपाध्यायः आत्मा यतिवरवृषभः नमः तस्मै ॥ ५३ ॥

भव्य-जनों को धर्म-देशना देने में नित-निरत रहे,
तीन-रतन से मण्डित होते लौकिकता से विरत रहे ।
"उपाध्याय" ये पूज्य कहाते यतियों के भी दर्पण हैं,
मनसा-वचसा-वपुषा इन को नमन कोटिशः अर्पण हैं ॥ ५३ ॥

[रयणत्तयजुत्तो] રત્નત્રયથી યુક્ત [जो] જે [अप्पा] આત્મા [णिच्चं] હંમેશા [धम्मोवदेसणे] ધર્મોપદેશ કરવામાં [णिरदो] તત્પર (લીન) રહે છે [सो] તે આત્મા [जदिवरवसहो] યતિઓમાં શ્રેષ્ઠ [उवज्झाओ] ઉપાધ્યાય (પરમેષ્ઠી) છે. [तस्स] તેમને [णमो] નમસ્કાર હો.

जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप रत्नत्रय से सहित है; निरन्तर धर्म का उपदेश देने में तत्पर है; वह मुनीश्वरों में प्रधान 'उपाध्याय परमेष्ठी' कहलाता है । उसको में नमस्कार करता हूँ ॥ ५३ ॥

That being, the greatest of the great sages who being possessed of three jewels, is always engaged in preaching the reilgious trruths, is known as Upadhyaya (teacher teaching scriptures). Obeisance to him.

*

अनन्त सुख पाने सदा, भव से हो भयवन्त ।
अन्तिम क्षण तक मैं तुम्हें, स्मरूं स्मरें सब सन्त ॥

❀ साधु परमेष्ठी का स्वरूप

दंसणणाणसमग्गं मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं ।
साधयदि णिच्चसुद्धं साहू स मुणी णमो तस्स ॥ ५४ ॥

दर्शनज्ञानसमग्रं मार्गं मोक्षस्य यः हि चारित्रम् ।
साधयति नित्यशुद्धं साधुः सः मुनिः नमः तस्मै ॥ ५४ ॥

यथार्थ-दर्शन तथा ज्ञान से नियम रुप से सहित रहे,
निरतिचार वह 'चारित' ही है "मोक्षमार्ग" यह विदित रहे ।
इसी चरित की "साधु"-साधना सदा-सर्वदा करता है,
ध्यान-साधु का करो इसी से सभी आपदा हरता है ॥ ५४ ॥

[जो] જે [मुणी] મુનિ [हु] નિશ્ચયથી [दंसणणाणसमग्गं] દર્શન અને જ્ઞાન સહિત [मोक्खस्स] મોક્ષનાં [मग्गं] માર્ગરૂપ [चारित्तं] ચારિત્રને [णिच्चसुद्धं] સદા શુદ્ધ રીતથી [साधयदि] સાધે છે [स साहू] તે સાધુ (પરમેષ્ઠી) છે. [तस्स णमो] તેમને નમસ્કાર છે.

जो दर्शन और ज्ञान से पूर्ण, मोक्ष के मार्गभूत, सदाशुद्ध चारित्र को प्रकट रूप से साधते हैं वे मुनि 'साधु परमेष्ठी' हैं, उनको मेरा नमस्कार हो ॥ ५४ ॥

That sage who really practises well conduct which is always pure and which is on the path of liberation with right faith and knowledge is a Sadhu. Obeisance to him.

*

दया धर्म वर धर्म है, अदया-भाव अधर्म ।
अधर्म तज प्रभु धर्म ने, समझाया पुनि धर्म ॥

❀ निश्चय – ध्यान का स्वरूप

जं किंचिवि चिंतंतो णिरीहवित्ती हवे जदा साहू ।
लद्धूण य एयत्तं तदाहु तं तस्स णिच्छयं ज्झाणं ॥ ५५ ॥

यत् किञ्चित् अपि चिन्त्यन् निरीहवृत्तिः भवति यदा साधुः ।
लब्ध्वा च एकत्वं तदा आहुः तत् तस्य निश्चयं ध्यानम् ॥ ५५ ॥

चिन्ता क्या है, चिन्तन कुछ भी साधु करें वह, पर इतना,
ध्यान रहे बस निरीहता का साधुपना पनपे उतना ।
एक-ताजगी निरी-एकता पाता निश्चित साधु वही,
यही "ध्यान है निश्चय" समझो साधु बनो ! पर स्वादु नहीं ॥ ५५ ॥

[जदा] જ્યારે [साहू] સાધુ [एयत्तं] એકાગ્રતા [लद्धूण य] પ્રાપ્ત કરીને [जं किंचिवि] જે કંઈપણ (ધ્યાન કરવા યોગ્ય વસ્તુનું) [चिंतंतो] ચિંતન કરતા [णिरीहवित्ती] ઈચ્છા રહિત થાય છે [तदा] ત્યારે [तं तस्स णिच्छयं] તે કારણથી તેને નિશ્ચયથી [ज्झाणं] ધ્યાન [हवे] હોય છે.

ध्येय में एकाग्र चित्त होकर जिस किसी पदार्थ का ध्यान करता हुआ साधु जब निष्पृह वृत्ति (समस्त इच्छाओं से रहित) होता है उस समय वह उसका ध्यान निश्चय ध्यान होता है ॥ ५५ ॥

When a sadhu attaining concentration, without expectations by meditating on anything whatever, that state is called real meditation.

*

धर्मनाथ को नित नमूँ, सधे शीघ्र शिव शर्म ।
धर्म-मर्म को लख सकूँ, मिटे मलिन मम कर्म ॥

❀ परम – ध्यान का लक्षण

मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह किं वि जेण होइ थिरो ।
अप्पा अप्पम्मि रओ इणमेव परं हवे ज्झाणं ॥ ५६ ॥

मा चेष्टत मा जल्पत मा चिन्तयत किं अपि येन भवति स्थिरः ।
आत्मा आत्मनि रतः इदं एव परं भवति ध्यानम् ॥ ५६ ॥

कुछ भी स्पन्दन तन में मत ला बन्द-मुखी हो, जल्प न हो,
चिन्ता, चिन्तन मन में मत कर चेतन फलतः निश्चल हो ।
अपने ही आतम में अपना अविचल हो, जो रमना है,
ध्यान रहे यह परम-ध्यान है और ध्यान तो भ्रमणा है ॥ ५६ ॥

(હે ભવ્ય પુરુષ !) [किं वि] કંઈ પણ [मा चिट्ठह] (શરીરથી) ચેષ્ટા ન કરો, [मा जंपह] (મોઢેથી) ન બોલો, [मा चिंतह] (મનથી) ચિંતન ન કરો [जेण अप्पा] જેથી આત્મા [अप्पम्मि] આત્મામાં [थिरो होइ] સ્થિર થઈ [रओ] લીન થાય છે. [इणमेव परं] આ જ પરમ (ઉત્કૃષ્ટ) [ज्झाणं] ધ્યાન [हवे] હોય છે.

हे भव्य पुरुषो ! तुम कुछ भी चेष्टा मत करो (काय की क्रिया मत करो) कुछ भी मत बोलो और कुछ भी मत विचारो (संकल्प-विकल्प न करो) जिससे कि तुम्हारा आत्मा अपने आत्मा में तल्लीन स्थिर होवे, आत्मा में लीन होना परमध्यान है ॥ ५६ ॥

Do not act (move any part of the body), do not talk, do not think, so that the soul may be attached to and fixed in itself. This only is excellent meditation.

*

शान्तिनाथ हो शान्त, कर सातासाता सान्त ।
केवल, केवल-ज्योतिमय, क्लान्ति मिटी सब ध्यान्त ॥

❀ ध्यान की प्राप्ति का उपाय

तवसुदवदवं चेदा ज्झाणरहधुरंधरो हवे जम्हा ।
तम्हा तत्तियणिरदा तल्लद्धीए सदा होह ॥ ५७ ॥

तपःश्रुतव्रतवान् चेता ध्यानरथधुरन्धरः भवति यस्मात् ।
तस्मात् तत्त्रिकनिरताः तल्लब्ध्यै सदा भवत ॥ ५७ ॥

व्रत के धारक, तप के साधक श्रुत-आराधक बना हुआ,
वही ध्यान-रथ-धुरा सुधारे नियम रहा यह बन्धा हुआ ।
इसीलिए यदि सुनो तुम्हें भी ध्यानामृत को चखना है,
व्रत में, तप में, श्रुत में निज को निश-दिन तत्पर रखना है ॥ ५७ ॥

[जम्हा] કારણ કે [तवसुदवदवं] તપ, શ્રુત અને વ્રતને ધારણ કરનાર [चेदा] આત્મા [ज्झाणरहधुरंधुरो] ધ્યાનરૂપી રથની ધુરાને ધારણ કરનાર [हवे तम्हा] થાય છે, તે કારણથી [तल्लद्धीए] તે પરમધ્યાનની પ્રાપ્તિ માટે [सदा] હંમેશા [तत्तियणिरदा] (તપ, શ્રુત અને વ્રત) એ ત્રણમાં લીન [होइ] થાઓ.

क्योंकि तप, श्रुत और व्रत का धारक आत्मा ध्यानरूपी रथ की धुरा को धारण करने वाला होता है, इस कारण हे भव्य पुरुषो ! तुम उस ध्यान की प्राप्ति के लिये निरन्तर तप, श्रुत और व्रत में तत्पर होवो ॥ ५७ ॥

As a soul which (practises) penances, (holds) vows and has knowledge of scriptures, becomes capable of holding the axle of the chariot of meditation, so to attain excellent meditation be always engaged in these three (i.e. penances, vows and scriptural knowledge).

*

✿ ग्रन्थकार की प्रार्थना

दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा दोससंचयचुदा सुदपुण्णा ।
सोधयंतु तणुसुत्तधरेण णेमिचंदमुणिणा भणियं जं ॥ ५८ ॥

द्रव्यसंग्रहं इमं मुनिनाथाः दोषसंचयच्युताः श्रुतपूर्णाः ॥
शोधयन्तु तनुश्रुतधरेण नेमिचन्द्रमुनिना भणितं यत् ॥ ५८ ॥

बिन्दु-मात्र श्रुत का धारक हूँ पार सिन्धु का कब पाता ?
"नेमिचन्द्र" नामक मुनि, मुझसे लिखा "द्रव्य-संग्रह" साता ।
दूर हुये दोषों से कोसों श्रुत-कोशों से पूर हुये,
शोधें वे "आचार्य" इसे यदि भाव यहाँ प्रतिकूल हुये ॥ ५८ ॥

[तणुसुत्तधरेण] અલ્પજ્ઞાનના ધારક [णेमिचंदमुणिणा] નેમિચન્દ્ર મુનિએ [जं] જે [इणं दव्वसंगहं] આ દ્રવ્યસંગ્રહ નામનો ગ્રંથ [भणियं] કહ્યો છે, તે [सुदपुण्णा] શાસ્ત્રના જ્ઞાતા, (શ્રુતજ્ઞાનમાં પૂર્ણ) [दोससंचयचुदा] દોષના સમૂહથી રહિત, એવા [मुणिणाहा] મુનિરાજ (મુનિઓનાં સ્વામી) [सोधयंतु] શુદ્ધ કરો.

अल्पज्ञान के धारक मुझ नेमिचन्द्र मुनि ने जो यह द्रव्यसंग्रह कहा है इसको दोषों से रहित और ज्ञान से पूर्ण ऐसे आचार्य शुद्ध करें ॥ ५८ ॥

Let the great sages, full of the knowledge of sastras (scriptures) and freed from the collection of faults, correct this Dravya-samgraha which is spoken by the sage Nemichandra who has little knowledge of the sastras.

(In this last verse, the author, Nemichandra Muni, in all humility belittles himself and acknowledging that there may be faults in his work, requests the great sages to correct the same).

*

मंगलभावना

मेरा तेरा-पन मिटे, भेद-भाव का नाश ।
रीति-नीति सुधरे सभी, वेद-भाव में वास ॥ १ ॥

भाग्य भला वह क्या रहा, उदय कर्म का मात्र ।
यहां देख मत, देख ले, जहां धर्म का पात्र ॥ २ ॥

नातो पर पर रोष हो, ना कर्मों का दोष ।
है अपना अपराध यह, खोया है निज-होश ॥ ३ ॥

सदा सरलता साध लो, और कुटिलता त्याग ।
बनो धवल तुम हंस से, विरागता से राग ॥ ४ ॥

काले बादल बन, तपी-भूपर बरसो आप ।
भरे पाप-घट पुण्य में, बदले अपने आप ॥ ५ ॥

लाभ उलटता हो भला, भला उलटता लाभ ।
हो सब ज्यों का त्यों सदा, भले रहे बदलाव ॥ ६ ॥

स्थान एवं समय परिचय

मुक्तागिरि पर मुक्त मुनि, साढे तीन करोड़ ।
मुक्तागिरि को नित नमूं, नत-सिर हो कर-जोड़ ॥ ७ ॥

***स्वर-आतम-रस-गन्ध का, अक्षय-तृतीया योग ।**
पूर्ण हुआ अनुवाद यह, देता ध्रुव-आलोक ॥ ८ ॥

* * *

* ७-१-५-२ 'अङ्कानां वामतो गतिः' के अनुसार वीर निर्वाण संवत २५१७ अक्षय तृतीया